॥ संतबानी ॥

संतबानी पुस्तक-माला के छापने का अभिप्राय जगत-प्रसिद्ध महात्माओं की बानी और उपदेश को जिन का लोप होता जाता है बचा लेने का है। जितनी बानियाँ हमने छापी हैं उन में से विशेष तो पहिले छपी ही नहीं थीं और जो छपी थीं सो ऐसे छिन्न भिन्न और बेजोड़ रूप में या क्षेपक और त्रुटि से भरी हुई कि उन से पूरा लाभ नहीं उठ सकता था।

हमने देश देशान्तर से बड़े परिश्रम और व्यय के साथ हस्तलिखित दुर्लभ ग्रन्थ या फुटकल शब्द जहाँ तक मिल सके असल या नक़ल कराके मँगवाये। भर-सक तो पूरे ग्रन्थ छापे गये हैं और फुटकल शब्दों की हालत में सर्व साधारण के उपकारक पद चुन लिये हैं। प्रायः कोई पुस्तक बिना दो लिपियों का मुक़ाबला किये और ठीक रीति से शोधे नहीं छापी गई है और कठिन और अनूठे शब्दों के अर्थ और संकेत फ़ुट-नोट में दे दिये हैं। जिन महात्मा की बानी है उनका जीवन चरित्र भी साथ ही छापा गया है और जिन भक्तों और महापुरुषों के नाम किसी बानी में आये हैं उनके वृत्तान्त और कौतुक संक्षेप से फ़ुट-नोट में लिख दिये गये हैं।

दो अन्तिम पुस्तकें इस पुस्तक-माला की अर्थात् संतबानी संग्रह भाग १ (साखी) और भाग २ (शब्द) छप चुकी, जिनका नमूना देख कर महामहोपाध्याय पं० सुधाकर द्विवेदी बैकुंठ-वासी ने गद्गद होकर कहा था—"न भूतो न भविष्यति"।

एक अनूठी और अद्वितीय पुस्तक महात्माओं और विद्वानों के वचनों की "लोक परलोक हितकारी" नाम की गद्य में सन् १९१९ में छपी है जिसके विषय में श्रीमान् महाराजा काशी नरेश ने लिखा है—"यह उपकारी शिक्षाओं का अचरजी संग्रह है जो सोने के तोल सस्ता है"।

पाठक महाशयों की सेवा में प्रार्थना है कि इस पुस्तकमाला के जो दोष उनकी दृष्टि में आवें उन्हें हमको कृपा करके लिख भेजें जिससे वह दूसरे छापे में दूर कर दिये जावें।

हिन्दी में और भी अनूठी पुस्तकें छपी हैं जिनमें प्रेम कहानियों के द्वारा शिक्षा बतलाई गई है। उनके नाम और दाम सूची से, जो कि इस पुस्तक के अंत में छपी है, देखिये। अभी हाल में फकीर बाजक और अनुराग सागर भी छापा गया है जिसका दाम क्रमनः ॥।) और १) है।

मैनेजर, बेलवेडियर छापाख़ाना,

जून सन् १९२१ ई०

इलाहाबाद।

धरनीदासजी

का

जीवन-चरित्र

बाबा धरनीदास जी जाति के श्रीवास्तव्य कायस्थ एक बड़े महात्मा थे। इनका जन्म ज़िला छपरा (सूबा बिहार) के माँझी नामी गाँव में संवत १७१३ विक्रमी में हुआ पर चोला छोड़ने का समय ठीक मालूम नहीं होता। माँझी का गाँव सरजू नदी के तट पर उत्तर की ओर बसा है जहाँ अब एक बड़ा पुल रेल का बन रहा है।

धरनीदास जी के पिता का नाम परसरामदास था और घर में खेती का काम होता था। धरनीदासजी आप माँझी के बाबू के दीवान थे और उनके मालिक उनकी बड़ी क़दर करते थे और पूरा भरोसा रखते थे पर उनकी अंतर गति से बेख़बर थे।

कहते हैं कि एक दिन धरनीदास जी ज़मींदारी के काम में लगे हुये थे कि अचानक पानी भरा हुआ लोटा जो पास रक्खा हुआ था उन्हों ने काग़ज़ और बस्ते पर ढलका दिया जिस पर पूछा गया कि ऐसा क्यों किया। धरनीदास जी ने कुछ जवाब न दिया; आख़िर को बाबू की अप्रसन्नता और उन्हें पागल समझ लेने पर उन्हों ने कहा कि जगन्नाथजी के बस्त्र में आरती करते समय आग लग गई थी जिसे मैं ने पानी डाल कर बुझाया है। इस कथन का बिश्वास बाबू और उनके अधिकारियों को न हुआ और इनकी हँसी उड़ाई जिस पर धरनीदास जी बस्ता छोड़ कर यह कहते हुए चल दिये—

"लिखनी नाँहि करों रे भाई।
मोहि राम नाम सुधि आई"॥

राजा ने दो भरोसे के आदमी जगन्नाथपुरी को भेज कर तहक़ीक़ात की तो मालूम हुआ कि सचमुच जिस समय कि बाबा धरनी दास ने लोटे का पानी गिराया वहाँ आग लगी थी जिसे उनकी सूरत का एक आदमी प्रगट हो कर बुझा गया। इस हाल को सुन कर बाबू बड़े लज्जित हुए और आप बाबा धरनीदास को बुलाने और उनसे अपना अपराध छिमा कराने को गये पर उन्हों ने फिर नौकरी पर लौटने से इनकार किया और कहा कि अब हम को भगवत्भजन करने दो। बाबू ने बहुत कुछ नक़द और जमीन भी उनके गुज़ारे के लिये देना चाहा पर उन्होंने नामजूर किया।

यही कथा जगन्नाथ पुरी में आग बुझाने को कबीर साहब की बाबत भी प्रसिद्ध है और यह कहाँ तक एतबार के लायक़ है इसे हम पढ़नेवालों की राय पर छोड़ते हैं।

इसके बाद बाबा धरनीदास गृहस्थ आश्रम छोड़ कर साधू हो गये और उसी गाँव में एक झोपडी डाल कर रहने लगे। कहते हैं कि उन्हों ने गृहस्थ आश्रम में चन्द्रदास नाम के एक साधू से दीक्षा ली थी और भेष लेने पर एक दूसरे साधू सेवानन्द को गुरू धारन किया। जो हो इसमें सदेह नहीं कि धरनीदास जी आप ऊंचे दरजे के शब्द-अभ्यासी और गहिरे भक्त थे जिनकी गति उनकी अत्यंत मधुर, प्रेम रस में पगी हुई, और अतरी भेद की बानी से प्रगट होती है।

कितनी ही करामातें बाबा धरनीदास जी की महिमा की मशहूर हैं मसलन एक बार उनको कई अहीर जाति के चोर रात को मिले और उनसे अपनी राग में गीत गवाई फिर वहाँ से चल कर चोरी को गये और चोरी करने के पीछे आँखों पर ऐसी अँधेरी छा गई कि रास्ता घर से निकलने का न सूझता था, जब उनको बहुत दुखी देखा तो धरनीदास जी ने अपने बड़े चेले सदानन्द जी को दया करके भेजा जो उनको अपने गुरु की सेवा में लाये।

उनके सम्मुख पहुँचते ही चोरों की आँख खुल गई और वह महात्मा जी के चरनों पर गिर कर सच्चे साधू बन गये।

इसी तरह कहते हैं कि एक वार वहुत से भेष रामत करते हुए आये जिनके भोजन का प्रवन्ध किया गया पर जब खाने का समय आया तो उन लोगों ने शरारत से कहा कि तुम जाति के कायस्थ हो और द्वारिकाधीश का छाप लगा कर अपनी शुद्धि नहीं की है इससे हम तुम्हारा धान्य ठाकुर जी को कैसे भोग लगा सकते हैं। धरनीदास ने हज़ार समझाया पर उन लोगों ने एक न सुनी आख़िर को महात्मा जी बोले कि अच्छा थोड़ी सी मुहलत दो तो हम द्वारिका जाकर छाप ले आते हैं यह कह कर अपनी कुटिया में घुस गये और तुर्तही वाहर निकल कर द्वारिका जी की छाप अपनी बाँह पर दिखला दी जिस को देखकर वह लोग अचरज में आ गये और चरनों पर गिरे।

ऐसे ही धरनीदास जी के शरीर त्याग करने की कथा प्रसिद्ध है कि जब समय आया तो अपने चेलों से कहा कि अव हम विदा होते हैं यह कह कर उस स्थान पर आये जहाँ गंगा और सरजू का संगम है और जल पर चादर विछा कर उस पर आसन जमा कर बैठ गये। थोड़ी देर तक धारा के साथ वहते नज़र आये फिर उनके चेलों को दीख पड़ा कि पानी में आग लगी जिसकी लवर आकाश तक उठी और धरनीदास जी गुप्त हो गये।

इन कथाओं पर टीका करना ऐसे भोले भक्तों का जो उन पर सचौटी से विश्वास करते हैं जी दुखाना होगा, तौ भी इतना कहना अनुचित न होगा कि वावा धरनीदास सरीखे महात्मा की महिमा ऐसी सिद्धि शक्ति की कथाओं की मुहताज नहीं है और न सच्चे महात्मा कभी ऐसी करामात दिखलाते हैं।

वावा धरनीदास जी की गद्दी पर उन के गुरुमुख चेले सदानंद जी बैठे। अब तक वह गद्दी क़ायम है और हिन्दुस्तान भर में हज़ारों अनुयायी उनके पंथ के फैले हुये हैं, यद्यपि शब्द-अभ्यास

विरले ही करते हैं। धरनीदासजी के लिखे हुए दो ग्रंथों का पता चलता है—एक 'सत्यप्रकाश' और दूसरा 'प्रेम प्रकाश'।

इस पुस्तक के पद और साखी इत्यादि कुछ तो हम को बाबू सरजूप्रसाद जी मुआफ़ीदार तेरही ज़िला गोंडा ने दिये जिन की सहायता संतबानी पुस्तक-माला के काम में कई बरस से चली आती है और कुछ बाबू धीरजीदास जी, सेक्रिटरी संतमत सुसैटी, जोतरामराय ज़िला पुरनिया के भेजे हुए वरक़ों से चुने गये हैं, जिन दोनों महाशयों को हम धन्यवाद देते हैं।

इलाहाबाद, दास,
जून, सन १९११ ई० एडिटर।

धरनी दास जी की बानी

फुटकर शब्द

(१)

एक पिया मोरे मन मान्यो पति ब्रत ठानौं हो ।
अवरो जो इन्द्र समान, तो तृन करि जानौं हो ॥१॥
जहँ प्रभु बैसि सिंहासन, आसन डासब हो ।
तहवाँ बेनियाँ डोलइबौं, बड़ सुख पइबौं हो ॥२॥
जहँ प्रभु करहिं लवासन*, पवढ़हिं आसन हो ।
कर तें पग सुहरैबौं, हृदय सुख पइबौं हो ॥३॥
धरनी प्रभु चरनामृत, नितहिं अचइबौं हो ।
सन्मुख रहिबौं मैं ठाढ़ी, अंते नहिं जइबौं हो ॥४॥

(२)

बहुत दिनन पिय बसल बिदेसा ।
आजु सुनल निज स्रवन सँदेसा ॥ १ ॥
चित चितसरिया† मैं लिहलौं लिखाई ।
हृदय कमल धइलौं दियना लेसाई ॥ २ ॥

* भोजन । † चित्रशाला ।

प्रेम पलँग तहँ धइलौं बिछाई।
नख सिख सहज सिँगार बनाई ॥ ३ ॥
मन हित अगुमन दिहल चलाई।
नयन धइल दोउ दुअरा बैसाई* ॥ ४ ॥
धरनी धनि† पल पल अकुलाई।
बिनु पिया जिवन अकारथ जाई ॥ ५ ॥

(३)

पिया मोर बसैं गउर गढ़‡, मैं बसौं प्राग‡ हो।
सहजहिं लागु सनेह, उपजु अनुराग हो ॥ १ ॥
असन बसन तन भूषन, भवन न भावै हो।
पल पल समुझि सुरति, मन गहवरि§ आवै हो ॥२॥
पथिक न मिलहि सजन जन, जिनहिं जनावौं हो।
बिहवल बिकल बिलखि चित, चहुँ दिसि धावौं हो ॥३॥
होय अस मोहिं ले जाय, कि ताहि ले आवै हो।
तेकरि होइबौं लउँड़िया, जे रहिया बतावै हो ॥४॥
तबहिं त्रिया पत‖ जाय, दोसर जब चाहै हो।
एक पुरुष समरथ, धन बहुत न चाहै हो ॥५॥
धरनी गति नहिं आनि, करहु जस जानहु हो।
मिलहु प्रगट पट¶ खोलि, भरम जनि मानहु हो ॥६॥

(४)

जहिया भइल गुरू उपदेस। अंग अंग कै मिटल कलेस ॥१॥
सुनत सजग** भयो जीव। जनु अगिनी परे घीव ॥२॥

---

* बिठलाय दिया। † सोहागिन स्त्री। ‡ नाम नगर का (अर्थ सपेद शहर)।
§ पछताना, घबराना। ‖ सुमत। ¶ घूंघट। ** जाग उठना।

उर उपजल प्रभु प्रेम। छुटि गे तब व्रत नेम ॥३॥
जब घर भइल अँजोर*। तब मन मानल मोर ॥४॥
देखे से कहल न जाय। कहले न जग पतियाय ॥५॥
धरनी धन तिन भाग। जेहिँ उपजल अनुराग ॥६॥

(५)

जग मेँ कायथ जाति हमारी।
पायो है माला तिलक दुसाला, परमारथ ओहदा री ॥१॥
कागद जहँ लगि करम कमायो, कैँची ज्ञान रसा† री।
गुरु के चरन अनंद जाप करि, अनुभव वरक‡ उतारी ॥२॥
मन मसिहानी§ साँच की स्याही, सुरति सोफ|| भरि डारी।
भरम काटि करि क़लम कुरी छवि, तकि तृस्ना खत¶ मारी ३
तबलक** तत्त दया को दफ्दर, संत कचहरी भारी।
रैयत जगत सब्द कै कौँड़ी, दूजी मार न मारी†† ॥४॥
नाम रतन को भरो खजाना, धरो सो हृदय कोठारी।
है कोइ परखनहार विवेकी, बारम्बार पुकारी ॥५॥
धरनी साल व साल अमाली‡‡ जमाखरच यहि पारी।
प्रभु अपने कर§§ कागज मेरो, लीजै समुझि सुधारी ॥६॥

(६)

मन तुम यहि विधि करो कैथाई।
सुख संपति कबहूँ नाहिँ छीजै, दिन दिन बढ़त बड़ाई ॥१॥

---

*उँजेरा। †तीव्र। ‡पन्ना। §दावात। ||खुज्जा। ¶क़त जोकि क़लम में चीरा जाता है। **मुट्ठा काग़ज़ों का। ††क़ायदा है कि कचहरी (अदालत) में जो क़ुसूरवार समझा जाता है उस को सज़ा या मार दी जाती है परंतु संतों की कचहरी में जगत को रैयत (जीवों) को शब्द रूपी कौंड़ो (कोड़ा) की मार के सिवाय दूसरी मार नहीं दी जाती। ‡‡जाँच करने वाला अमला। §§हाथ।

कसबा* काया करु ओहदा री, चित चिट्ठा† धरु साधी ।
मोहासिब‡ करि अस्थिर मनुवाँ, बूल मंत्र अवराधी ॥२॥
तत्त को तेरिज§ बेरिज‖ बुधि की, ध्यान निरखि ठहराई ।
हृदय हिसाब समुझि कै कीजै, दहियक देहु¶ लगाई ॥३॥
राम को नाम रटो रोजनामा**, मुक्ति सौं फरद बनाई ।
अजपा जाप अवारिजा†† करि के, सर्व कर्म बिलगाई ॥४॥
रैयत पाँच पचीस बुझाए, हरि हाकिम रहे राजी ।
धरनी जमाखरच बिधि मिलि है, को करि सकै गमाजी‡‡ ५

(७)

पानी से पैदा कियो सुनु रे मन बौरे, ऐसा खसम खुदाय कहाई रे ।
दाह§§ भयो दस मास को सुनु रे मन बौरे, तरसिर ऊपर पाँई रे।
आँच लगी जब आग की सुनु रे मन बौरे, आजिज ह्वै अकुलाई रे ।
कवल कियो मुख आपने सुनु रे मन बौरे, नाहक अंक लिखाई रे २
अब की करिहौं बंदगी सुनु रे मन बौरे, जो पइहौं मुकलाई‖‖ रे।
जग आये जंगल परे सुनु रे मन बौरे, भरम रहे अरुझाई रे ३
पर की पीर न जानिया सुनु रे मन बौरे, नाहक छुरी चलाई रे।
बाँधि जँजीरे जाइ हौ सुनु रे मन बौरे, बहुरि ऐसहीं जाई रे ४

---

* गाँव । ‡ हिसाब करनेवाला या न्याय करने वाला हाकिम । § खुलासा जमाबंदी या हिसाब का । ‖ मीज़ान या जोड़ती का कागज़ । ** रोज़नामचा । †† हिसाब का चिट्ठा । ‡‡ ग़बन, चोरी । §§ गर्भ की जलन । ‖‖ मुकलना = भेजना; गर्भ में जब बालक बहुत तकलीफ़ पाता है तो मालिक से प्रार्थना करता है कि अब की फंद से छुड़ा दो तो अब बंदगी भक्ति करूँगा ।

सतगुरु कै उपदेस ले सुन रे मन बौरे, दोजख दरद मिटाई रे।
मानुष देह दुरलभ है सुनु रे मन बौरे, धरनी कह समुझाई रे॥५॥

(८)

भाई रे जीभ कहल नहिँ जाई।
नाम रटन को करत निठुराई, कूदि चलै कुचराई* ॥१॥
चरन न चलै सुपंथ पै पग दुइ, अपथ चलै अतुराई† ।
देत बार कर दीन्ह दूबरो, लेत करै हथियाई‡ ॥२॥
नैना रूप सरूप सनेही, माद स्रवन लुबधाई§ ।
नासा चहती बास बिषै की, इन्द्री नारि पराई ॥३॥
संत चरन को सीस नवै नहिँ, ऊपर अधिक तराई।
जो मन घेरि बेन्हिये‖ बाँधौ, भाजै छाँद¶ तुराई ॥४॥
का सौं कहौं कहे को मानै, अंग अंग अकुठाई** ।
धरनीदास आस तब पूजै, जो हरि होहिँ सहाई ॥५॥

(९)

मन बसि लेहु अगम अटारी ॥टेक॥
नव नारिन को द्वारा निरखो, सहज सुखमना नारी ॥१॥
अजब अवाज नगारा बाजत, गगन गरजि धुनि भारी ॥२॥
तहँ बरे बाती दिवस न राती, अलख पुरुस मठ धारी ॥३॥
धरनी कै मन कहा न मानै, तबहिँ हनो है कटारी ॥४॥

(१०)

मन रे तू हरि भजु अवरि कुमति तजु,
ह्वै रहु बिमल बिरागी अनुरागी लो ॥१॥

---

*बैल के अड़ने को कूचर कहते हैं। †जलदी। ‡देने की बेर अपने हाथ को कमज़ोर कर लेता याने खींचे रहता है और लेने की बेर हाथ फैला देता है। §ख़ाहिशमंद। ‖पकड़ना ¶रस्सी। **अकुलाता है।

देई देवा सेवा झूँठी, जैसे मरकट मूठी,
अंत बहुरि बिलगाने पछिताने लो ॥२॥
जठर अगिन जरै, भोजन भसम करै,
तहँ प्रभु पालल दैंही, नित तेही लो ॥३॥
सुत हित बंधु नारी, इन सँग दिना चारी,
जल सँग परत पखाने*, असमाने लो ॥४॥
पर जन हाथी घोरा, इहव कहत मोरा,
चित्र लिखल पट† देखा, तस लेखा लो ॥५॥
घरनी भिच्छुक बानी, हम प्रभु अज्ञा मानी,
मिलहु पट‡ खोली, अनमोली लो ॥६॥

(११)

मन तुम कस न करहु रजपूती ॥१॥
गगन नगारा बाजु गहागह, काहे रहो तुम सूती ॥२॥
पाँच पचीस तीन दल ठाढ़े, इन सँग सेन§ बहूती ॥३॥
अब तोहि घेरी मारन चाहत, जस पिंजरा महँ तूती ॥४॥
पाइहो राज समाज अमर पद, ह्वै रहु विमल विभूती ॥५॥
धरनीदास विचार कहतु है, दूसर नाहि सपूती ॥६॥

आरती व भोग

(१)

भक्त बछल‖ जब भोग लगावै। पंचामृत पट रस रुचि भावै ॥१॥
आदि कुमारी चउका सारै। चरन पखारि कै वेद विचारै ॥२॥
ब्रह्मा विस्नु महेसुर देवा। कर जोरे ठाढ़े करि सेवा ॥३॥

---

*ओल। †पटरी। ‡किवाड़। §फ़ौज। ‖भक्त वत्सल।

आरति सेत अनंत बिराजै। सहजहिं सब्द अनाहद गाजै ॥४॥
धरनी प्रभु देवन को देवा। मानि लेत सब जन की सेवा ॥५॥

(२)

मन बच क्रम मोरे राम कि सेवा। सकल लोक देवन को देवा १
बिनु जल जल भरि भरि नहवावौं। बिना धूप के धूप धुपावौं २
बिन घंटा घरी घंट बजावौं। बिनहिं चँवर सिर चँवर ढुरावौं ३
बिन आरति तहँ आरति वारौं। धरनी तहँ तन मन धन वारौं ४

॥ चितावनी गर्भ लीला ॥

॥ रेख़ता ॥

जै जै उचारो, "धरनी" ध्यान धारो।
तजो मन बिकारो, भजो प्रान प्यारो ॥१॥
जबै गर्भ बासा, कियो मानुखासा।
बनो माथ हाथा, चरन पीठ साथा ॥२॥
लगो पेट ग्रीवा*, अहुठ हाथ सीवा।
रकत मास हड्डी, तुचा रोम चड्ढी ॥३॥
कियो दसव द्वारा, पवन प्रान धारा।
तहाँ प्रान प्यारा, दियो आय चारा ॥४॥
बँधे अष्ट गाता, अधो मुख झुलाता।
भयो कष्ट भारी, तो कहता पुकारी ॥५॥
नरक तें निकारो, हौं बंदा तिहारो।
करौं भक्ति ऐसी, कहौं आज जैसी ॥६॥

---

* गर्दन।

चरन चित्त लावौं, न काहू दुखावौं ।
दया करि दयाला, उहाँ तें निकाला ॥७॥
कछुक दिन अचेते, गये दूध लेते ।
बहुरि अन्न पानी, बचा बोल जानी ॥८॥
कही काहु माता, पिता बहिन भाई ।
लगो काहु चाचा, चचानी सगाई ॥९॥
ससेरा फुफेरा खलेरा* घनेरा ।
अरोसो परोसो चिन्हो चेर चेरा ॥१०॥
कुला कर्म जानो यगानो बिगानो ।
उहाँ गुष्ठ† कीन्हो सो भरमो भुलानो ॥११॥
गई बालवस्था भयो देँह कासा ।
बहू ब्याह लाये बजाये दमामा ॥१२॥
घोड़े बटोरे बराती बनाये ।
बड़े डिंभ‡ करि कै बहू ब्याह लाये ॥१३॥
त§ दुनिया के परिपंच देखौ जु आये ।
अपहिं आपने पाँव बेरी बँधाये ॥१४॥
खनी खंदकै कोट कीन्हो कँगूरा ।
महल के टहल में घनेरे मजूरा ॥१५॥
माया को पसारा किये फौज भारी ।
बड़ो साहबी चाँप कीन्हो सवारी ॥१६॥
कबहुँ जाय पच्छिन सोँ पंछी धरावै ।
कबहुँ जंगली जीव कुत्तन तुरावै ॥१७॥

---

* मँवसियाउत नाता । † जो गर्भ में प्रतिज्ञा की थी । ‡ धूमधाम, टंटराग । § तौ ।

कबहुँ जाल जंजाल मच्छी बझावै ।
कबहुँ बन घेरावै अगिन से जरावै ॥१८॥
सो तोपैं गढ़ावै गढ़ी को ढहावै ।
कबहुँ बंद बेसी मवेसी ले आवै ॥१९॥
बड़े चाक चौखूट ईंटा पकावै ।
जड़ै पाथरै नक्सगीरी करावै ॥२०॥
धरा धौरहर धवल ऊँचो उठावै ।
तहाँ जोरि आछे बिछौना बिछावै ॥२१॥
तहाँ फूल फैलो लगे तूल तकिया ।
दरीची बरीची उठै झाँक झाँकिया ॥२२॥
सिपाही घनेरे खड़े सीस नावैं ।
किते भिच्छुको झूठ सोभा सुनावैं ॥२३॥
हरिन माल* मेढ़ा व हस्ती लड़ावै ।
नई नागरी नारि† नाटिन नचावै ॥२४॥
घरी को बजावै समुझि जिय न आवै ।
हरै धन बिराना धसोरा‡ लगावै ॥२५॥
कतेको भले जीव सूली चढ़ावै ।
महा मस्त है मुंड-माला बँधावै ॥२६॥
जो हरि की भगति जीव-दाया दिढ़ावैं ।
करै ता की निंदा नगीचा न आवैं ॥२७॥
खिलौका पसारा मनहिं मन विचारा ।
जगत जेर तारा जिवन धर हमारा ॥२८॥

---

* पहलवान । † पतुरिया । ‡ धाँधली ।

त करता कला देखि ऐसो बिचारा ।
लगे दूत गैबी पलंगे पछारा ॥२०॥
किते वैद बैठे करैं औषधाई ।
कितेको करैं आप संसा ओझाई* ॥३०॥
किते जंत्र ताबीज लीखैं लिखावैं।
कितेको सगुनिया झरावैं फुकावैं ॥३१॥
कहैं आज ऐसो मिलै जो जियावै ।
बराबर कया† भार सोना सो पावै ॥३२॥
जबहिं जुक्ति जगदीस ऐसी बनाई ।
तबहुँ राम को नाम निहचै न आई ॥३३॥
तकावै तबेला झुमेला‡ के हाथी ।
परो बूझि यह दाँव संगी न साथी ॥३४॥
खजाना रुपइया सोनइया§ जहाँ हीं ।
रहो सुंदरी जो जहाँ सो तहाँ हीं ॥३५॥
कमाई समुझि जीव आई रोआई ।
गये ऐसहीं जन्म भक्ती न आई ॥३६॥
चलावन‖ चहै जाहि जगदीस रइया ।
कहो ताहि को जग कवन है रखइया ॥३७॥
दैव को न जाना दिया सो बुझाना ।
जगीरी तगीरी व थाना निसाना ॥३८॥
पयानो पयानो¶ पुकारैं जु लोगा ।
स रोवै कबीला परो मुंड सोगा ॥३९॥

---

* ओझा जो जंत्र मंत्र करते हैं । † काया, देह । ‡ झूमने वाला । § सोना
‖ बुलाना । ¶ निकालो निकालो ।

जना चारि आये वहाँ तैं उठाये।
अगिन मैं जराये नदी मैं बहाये ॥४०॥
पिन्हाये कफन खोदि खादे गड़ाये।
जु दीवान साहब सलामत को आये ॥४१॥
प्रबोधो न पाँचो बहुत नाच नाचो।
कला खेलि खाली चले इन्द्रजाली* ॥४२॥
उहाँ धर्मराया चितरगुप्त छाया।
जहाँ पत्र देखा सुकृत की न रेखा ॥४३॥
नहीं नाम गाया नहीं जीव दाया।
भगति की न भेवा नहीं साधु सेवा ॥४४॥
जुआ जन्म हारे वे गुरु के बिचारे।
भुलाने अनारी परो बीचि भारी ॥४५॥
गये यहि प्रकारा कितेको भुवारा† ।
अवर जो वेचारा करे को सुमारा ॥४६॥
गये कौरबो और सिसुपालु रावन
गये छप्पनो कोटि जादव कहावन ॥४७॥
गये चक्कवे चक्रवर्ती कहाये।
गये मंडली कोउ सँदेसो न पाये ॥४८॥
गये साकबंधी सका बाँधि केते।
ते माटी मिले बीर बलवान जेते‡ ॥४९॥

---

* काम क्रोध आदिक पाँचो दूत को रोका नहीं बल्कि इन्हीं का नाच नाचते थे सो मरने पर ऐसाही हुआ जैसे कि इन्द्रजालवाला तमाशा कर के चल देता है। † भुवाल=राजा। ‡ ऐसे राजा जिन का शाक चलता है और शूर बीर धूल में मिल गये।

गये खानखानाँ सुलताँ छत्रधारी ।
गये मीर उमरा करोरौं हजारी ॥५०॥
जो वेगम वेचारी गमे* मार डारी ।
हुती प्रान-प्यारी सो नारी पचारी ॥५१॥
गये रावना और रानी गुमानी ।
तिन्हों की कहो धौं कहाँ है निसानी ॥५२॥
गये लखपती जो धजा बाँधि कोटी ।
दियो डारि पाँसा लई मारि गोटी ॥५३॥
हिये चेति चेतो चितौनी चिताओं ।
सँभारो सँभारो अगाओं अगाओं† ॥५४॥
अरे दाग पीछे जतन कर धुवइये ।
अगाऊँ नहीं दाग के वाट जइये ॥५५॥
कृपा तें भई मानुषा देह यारो ।
चलो राह नेकी बदी को बिसारो ॥५६॥
भगति भाव चूके सोई भवन फूँके ।
जिन्हों भक्ति भैंटा जरा मरन मेटा ॥५७॥
सोई जन सुभागे उलटि पंथ लागे ।
हिये दाग दागे पिया प्रेम पागे ॥५८॥
भगति ध्रुव कमाया अचल राज पाया ।
भले आपु जागे अवर को जगाया ॥५९॥
त प्रहलाद अहलाद§ बहु भक्ति धारी ।
तपै‖ इन्द्र कैसो सकै कौन टारी ॥६०॥

* शोक । † आगे ही से । §उमग से । ‖उन को इंद्र कितनाही दुख दे पर भक्ति से नहीं टाल सकता ।

मोरधुज* तम्रधुज* जनक* अम्मरीषा* ।
जुधिष्ठर* भरथ* गोपिचंदे परीछा* ॥६१॥
बिभीषन को देखो कि जो भक्ति साजे ।
अजहुँ लोक निकलंक निरसंक गाजे ॥६२॥
भगति भरथरी की अवर जानि पीपा ।
जिन्हों का अमर नाम है दीप दीपा ॥६३॥
कबीरा* गोरखनाथ* मीरा* बड़ाई ।
कामा* व नामा* सुदामा* भलाई ॥६४॥
सुकदेव* जयदेव* सोभा सुहाई ।
रैदास* सेना* धना* धीरताई ॥६५॥
अमर नाम अहमद* तजी पादसाही ।
दुनी† में प्रगट प्रेम जा को सराही ॥६६॥
फकीरी करै कोउ साँचे अकीदा ।
मिसाले रहीमा* वजीदा* फरीदा* ॥६७॥
नीके जानि के चत्रभुज* चित्त लाया ।
भजी लोक लज्जा तजी मोह माया ॥६८॥
बिराजे जहाँ लौं भगत लोक माहीं ।
कहाँ लौं कहौं संत को अंत नाहीं ॥६९॥
सकल संत दाया चितवनी चिताया ।
धरनिदास आया सरन राम राया ॥७०॥

---

* भक्तों के नाम । † दुनिया ।

॥ शब्द ॥

(राग सारंग)

॥ १ ॥

भई कंत दरस बिनु बावरी ।
मो तन ब्यापै पीर प्रीतम की, मूरुख जानै आवरी ॥१॥
पसरि गयो तरु प्रेम साखा सखि, बिसरि गयो चित चाव री ।
भोजन भवन सिंगार न भावै, कुल करतूति अभाव री ॥२॥
खिन खिन उठि उठि पंथ निहारौं, बार बार पछितावँ री ।
नैनन अंजन नींद न लागै, लागै दिवस विभाव* री ॥३॥
दँह दसा कछु कहत न आवै, जस जल ओछे नाव री ।
धरनी धनी अजहुँ पिय पाऔं, तौ सहजै अनँद बधाव री ॥४॥

॥ २ ॥

हरि जन हरि के हाथ बिकाने ।
भावै कहो जग धृग जीवन है, भावै कहो बौराने ॥१॥
जाति गँवाय अजाति कहाये, साधु सँगति ठहराने ।
मेटो दुख दारिद्र परानो†, जूठन खाय अघाने ॥२॥
पाँच जने परबल परपंची, उलटि परे बंदिखाने ।
छुटी मजूरी भये हजूरी, साहब के मन माने ॥३॥
निरममता निरबैर सभन तें, निरसंका निरबाने ।
धरनी काम राम अपने तें, चरन कमल लपटाने ॥४॥

॥ ३ ॥

हरि जन वा मद के मतवारे ।
जो मद बिना काठि बिनु भाठी, बिनु अग्निहिं उदगारे ॥१॥

---

* बुरा । † भागा ।

बास अकास घराघर भीतर, बुंद झरै झलका रे ।
चमकत चंद अनंद बढ़ो जिव, सब्द सघन निरुवारे ॥२॥
बिनु कर धरे बिना मुख चाखे, बिनहिं पियाले ढारे ।
ताखन* स्यार सिंह को पौरुष, जुत्थ गजंद बिडारे ॥३॥
कोटि उपाय करै जो कोई, अमल न होत उतारे ।
धरनी जो अलमस्त दिवाने, सोइ सिरताज हमारे ॥४॥

॥ ४ ॥

हित करि हरि नामहिं लाग रे ।
घरी घरी घरियाल पुकारै, का सोवै उठि जाग रे ॥१॥
चोआ चंदन चुपड़ तेलना, और अलबेली पाग रे ।
सो तन जरे खड़े जग देखो, गूद निकारत काग रे ॥२॥
मात पिता परिवार सुता सुत, बंधु त्रिया रस तयाग रे ।
साधु के संगति सुमिर सुचित होइ, जो सिर मोटे भाग रे ॥३॥
सम्बत जरै बरै नहिं जब लगि, तब लगि खेलहु फाग रे ।
धरनीदास तासु बलिहारी, जहँ उपजै अनुराग रे ॥४॥

॥ ५ ॥

ऐसे राम भजन करु बावरे ।
बेद साखि जन कहत पुकारे, जो तेरे चित चाव रे ॥१॥
काया द्वार है निरखु निरंतर, तहाँ ध्यान ठहराव रे ।
तिरबेनी एक संगहिं संगम, सुन्न सिखर कहँ धाव रे ॥२॥
हद्द उलंघि अनाहद निरखौ, अरध उरध मधि ठाँव रे ।
राम नाम निसु दिन लव लागै, तबहिं परम पद पाव रे ॥३॥
तहँ है गगन गुफा गढ़ गाढ़ो, जहाँ न पवन पछाँव रे ।
धरनीदास तासु पद बंदै, जो यह जुगति लखाव रे ॥४॥

---

*ततछन = चटपट ।

॥ ६ ॥

मेरो राम भलो ब्यौपार हो ।
वा सोँ दूजा दृष्टि न आवै, जाहि करो रोजगार हो ।
जौ खेती तौ उहै कियारी, बिनु बीज बैल हर फार हो ।
रात दिवस उद्दम करे, गंग जमुन के पार हो ॥२॥
बनिज करो तौ उहै परोहन*, भरो बिबिधि परकार हो ।
लाभ अनेक मिले सतसंगति, सहजहिँ भरत भँडार हो ॥३॥
जो जाचौं† तौ वाहि को जाचौं, फिरौं न दूजे द्वार हो ।
धरनी मन बच क्रम मन मानो, केवल अधर अधार हो ॥४॥

(राग गंधार)

॥ १ ॥

जुगजुग संतन की बलिहारी ।
जो प्रभु अलख अमूरत अविगत, तासु भजन निरबारी ॥१॥
मन बच क्रम जगजीवन को ब्रत, जीवन को उपकारी ।
संतन साँच कही सबहिन तेँ, सुत पितु भूप भिखारी ॥२॥
ढोलिया ढोल नगर जो मारै, गृह गृह कहत पुकारी ।
गोधन जुतथ पार करिबे को, पीटत पीठि पहारी‡ ॥३॥
एहि जग हरि भगता पतिवरता, अवर वसै बिभिचारी ।
धरनी धृग जीवन है तिन्ह को, जिन्ह हरि नाम बिसारी ॥४॥

॥ २ ॥

जो जन भक्त वछल उपवासी§ ।
ता को भवन भयो उँजियारो, प्रगटी जोति दिवा सी ॥१॥

---

*गाड़ी । †माँगो । ‡गौओं के झुंड को इधर उधर विचर जाने से बचाने को पीठ पर लाठी मारते हैं । §सेवक ।

लोक लाज कुल कानि बिसारी, सार सब्द को गासी।
तिन्ह को सुजस दसो दिसि बाढ़ो, कवन सकै कर हाँसी ॥२॥
हरि ब्रत सकल भक्त जन गहि गहि, जम तेँ रहे मवासी* ।
देँह धरी परमारथ कारन, अंत अभैपुर बासी ॥३॥
काम क्रोध तृस्ना मद मिथ्या, सहज भये बनबासी†
संतत‡ दीन दयाल दयानिधि, धरनीजन सुखरासी ॥४॥

(राग बेलावल)

॥ १ ॥

मोहिँ कछु नाहिँ बिसाय, कोउ कैसहु कहि जाव री ॥ टेक ॥
झाँकि झरोखे रावला, मन मोहन रूप देखाव री ।
दृष्टि परे परबस पर्‍यो घर, घरहु न मोहिँ सोहाय री ॥१॥
जस जलचर जल में चरै, मुख चारो सहज समाय री ।
निगलत तो वहि निर्भय, अब उगलत उगलि न जाय री ॥२॥
जस पंछी बन बैठियो, अपनो तन मन ठहराय री ।
नर§ को भेद न भेदियो, पर अवचक लागे आय री ॥३॥

॥ दोहा ॥

जाहि परो दुख आपनो, सो जानै पर पीर ।
धरनी कहत सुन्यो नहीं, बाँझ की छाती छीर ॥

॥ २ ॥

तब कैसे करिहौ राम भजन ।
अबहिँ करौ जब कछु करि जानौ, अवचक
कौंच‖ मिलैगो तन ॥ १ ॥

* रक्षा में, बचे हुए। † निकसुआ, ख़ारिज। ‡ निरन्तर। § नरकुल जिसमें लासा लगा कर चिड़िया फँसाते हैं। ‖ मिट्टी

अंत समौ कस सोस उठैहो, बोल न ऐहै दसन रसन* ।
थकित नाटिका† नैन स्रवन बल, बिकल सकल अँग नख
सिख सन‡ ॥ २ ॥
ओझा बैद सगुनिया पंडित, डोलत आँगन द्वार भवन ।
मातु पिता परिवार बिलखि§ मन, तोरि लिये तन
सब अभरन ॥३॥
बार बार गुनि गुनि पछतैहो, परबस परिहै तन मन धन ।
धरनी कहत सुनो नर प्रानी, बेगि भजो हरि चरन सरन ॥४॥

॥ ३ ॥

एक अलाह के मैं कुरबानी ।
दिल ओझल‖ मेरा दिलजानी ॥१॥
तू मेरा साहब मैं तेरा बन्दा ।
तू मेरि सभी हवस पहिचन्दा ॥२॥
बार बार तुम कहँ सिर नावौं ।
जानि जरूर तुम्हैं गोहरावौं ॥३॥
तुमहिँ हमारे मक्का मदीना ।
तुमहीं रोजा रिजिक रोजीना ॥४॥
तुमहिं कोरान खतम खतमाना ।
तुम तसबी अरु दीन इमाना ॥५॥

---

*दाँत और ज़बान । †नाड़ी । ‡सिर से पैर तक । §रो कर । ‖ओट में ।

मैं आसिक महबूब तू दरसा।
बेगर* तोहि जहान जहर सा ॥६

देहु दिदार दिलासा एही।
नातर जाव बिनसि बरु देही ॥७।

कादिर तुमहिं कदर को जाना।
मैं हिन्दू किधौं मूसलमाना ॥ ८

धरनीदास खड़े दरवाजा।
सब के तुमहिं गरीब निवाजा ॥९

॥ ४ ॥

मैं निरगुनियाँ गुन नहिं जाना।
एक धनी के हाथ बिकाना ॥१॥

सोइ प्रभु पक्का मैं अति कच्चा।
मैं झूँठा मेरा साहब सच्चा ॥२॥

मैं ओछा मेरा साहब पूरा।
मैं कायर मेरा साहब सूरा ॥३॥

मैं मूरख मेरा प्रभु ज्ञाता।
मैं किरपिन मेरा साहब दाता ॥४॥

धरनी मन मानो इक ठाउँ।
सो प्रभु जीवो मैं मरिजाउँ ॥५॥

॥ ५ ॥

दूरि न भाई खसम खुदाई। है हाजिर पहिचानि न जाई ॥१॥

ढूँढ़ो अपना एही वजूदा†। बैठा मालिक महल मजूदा‡ ॥२॥

---

*बग़ैर, बिना। †शरीर। ‡मौजूद।

जा को साहब देत वफीक* । चार पियाला करु तहकीक ॥३॥
मरहम कोइ मिले जो यार । पल में पहुँचावै दरबार ॥४॥
धरनी बखत-बलंदी† सोइ । जाकी नजरि तमासा होइ ॥५॥

॥ ६ ॥

मेरे प्रभु तुमहिं अवर नहिं कोइ ।
बहु बिधि कहत सुनत नर लोइ ॥१॥
तुव बिस्वास दास मन मान ।
जुग जुग भगत-बछल जा की बान ॥२॥
अवरन्ह तें मेरो होत अकाज ।
छोड़ि कुल कानि बिसरि जग लाज ॥३॥
धरनी जनम हारि भावे जीति ।
अब मन बच क्रम हृदे प्रतीति ॥४॥

॥ ७ ॥

जब लग परम तत्तु नहिं जाने ।
तब लग भरम नहिं भाजे, करम कीँच लपटाने ॥१
सहस नाम कहि कहा भयो मन, कोटि कहत न अघाने ।
भूले भरम भागवत पढ़ि के, पूजत फिरत पखाने ॥२।
का गिरि कंदर‡ सुन्दर माहें, कंद मूरि खनि खाने ।
कहा जो बरष हजार रह्यो तन, अंत बहुरि पछिताने ।
दानि कर्णासुर सरसुती, रंक होउ भा राने ।
प्रेम प्रतीति अमिय परचे बिनु, मिले न पद निरबाने ।
मन बच करम सदा निसिबासर, दूजो ज्ञान न ध्याने ।
धरनी जन सतगुरु सिर ऊपर, भक्त-बछल भगवाने॥५

*तौफ़ीक़ । † भगवान । ‡पहाड़ की गुफा ।

मन भज ले पुरुष पुराना । जातैं बहुरि न आवन जाना ॥१॥
सब सृष्टि सकल जा को ध्यावै । गुरु-गम बिरला जन पावै ॥२॥
निसि बासर जिन्ह मन लाया । तिन्ह प्रगट परम पद पाया ॥३॥
नहिं मातु पिता परिवारा । नहिं बंधु सुता सुत दारा ॥४॥
वै तो घट घट रहत समाना । धनि सोई जो ता कहँ जाना ॥५॥
चारो युग संतन भाखी । सो तो वेद कितेबा साखी ॥६॥
प्रगटे जाके पूरन भागा । सो तो ह्वैगो सोन सोहागा ॥७॥
उन्ह निकट निरंतर बासा । तहँ जगमग जोति प्रकासा ॥८॥
धरनी जन दासन दासा । करु बिस्वंभर बिस्वासा ॥९॥

॥ ६ ॥

एक धनी धन मोरा हो ॥टेक॥

काहू के धन सोना रूपा, काहू के हाथी घोरा हो ।
काहू के मनि मानिक मोती, एक धनी धन मोरा हो ॥१॥
राज न हरै जरै न आगिन तैं, कैसहु पाय न चोरा हो ।
खरचत खात सिरात*कबहिं नहिं, घाट बाट नहिं छोरा हो ॥२
नहिं सँदूक नहिं भुइँ खनि गाड़ो, नहिं पट घालि मरोरा हो† ।
नैन के ओझल‡ पलकन राखौं, साँझ दिवस निसि भोरा हो ३
जब धन लै मनि बेचन चाहे, तीन हाट§ टटकोरा हो ।
कोई बसतु नाहिं ओहि जोगे, जो मोलऊँ सो थोरा हो ॥४॥
जा धन तैं जन भये धनी बहु, हिंदू तुरुक करोरा हो ।
सो धन धरनी सहजहिं पायो, केवल सतगुरु के निहोरा हो ५

*चुकना । †कपड़े में धर कर गाँठ दी । ‡ओट । §तीन लोक ।

(राग टोड़ी)

जब मेरो यार मिलै दिल जानी । होइ लवलीन करौँ मेहमानी १
हृदय कमल बिच आसन सारी । ले सरधा जल चरन खटारी* २
हित कै चंदन चरचि चढ़ायो । प्रीति कै पंखा पवन डोलायो ३
भाव के भोजन परसि जँवायो । जो उबरा सो जूठन पायो ४
धरनी इत उत फिरहि न भोरे† । सन्मुख रहहि दोउ कर जोरे ५

(राग नट)

॥ १ ॥

करता राम करै सोइ होय ।
कल बल छल बुधि ज्ञान सयानप, कोटि करै जो कोय ॥१॥
देई देवा सेवा करिके, भरम भुले नर लोय ।
आवत जात मरत औ जनमत, करम काँठ अरुझोय ॥२॥
काहे भवन तजि भेष बनायो, ममता मैल न धोय ।
मन मवास चपरि‡ नहिं तोड़ेउ, आस फाँस नहिँ छोय ॥३॥
सतगुरु चरन सरन सच पायो, अपनी देँह विलोय ।
धरनी धरनि फिरत जेहि कारन, घरहिँ मिले प्रभु सोय ॥४॥

॥ २ ॥

प्रभुजी अब जनि मोहिँ विसारो ।
असरन-सरन अधम-जन-तारन, जुग जुग विरद तिहारो ॥१॥
जहँ जहँ जनम करम वसि पायो, तहँ अरुझे रस खारो ।
पाँचहुँ के परपंच भुलनो, धरेउ न ध्यान अधारो ।
पाँचहुँ के परपंच भुलानो, धरेउ न ध्यान अधारो ॥२॥

---

* धोया । † भूल से । ‡ दृढ़ता, तत्परता ।

अंध गर्भ दस मास निरंतर, नखसिख सुरति सँवारो ।
मंजा* मुत्र अग्नि मल क्रम जहं, सहजै तहँ प्रतिपारो ॥३॥
दोजै दरस दयाल दया करि, गुन ऐगुन न विचारो ।
धरनी भजि† आयो सरनागति, तजि लज्जा कुल गारो‡॥४॥

॥ ३ ॥

अजहुँ मन सब्द प्रतीति न आई ॥१॥
चंचल चपल चहूँ दिसि डौलै, जगत नाहि चतुराई ॥२॥
सब्द तेँ सुक मुनि सारद नारद, गोरख की गरुआई ॥३॥
सब्द प्रतीत कबीर नामदेव, जागत जक्त दोहाई ॥४॥
सदन धना रैदास चतुरभुज, नानक मीराबाई ॥५॥
संत अनंत प्रतीति सब्द की, प्रगट परम गति पाई ॥६॥
धरनी जो जन सब्द-सनेही, मोहिँ बरनी नहिँ जाई ॥७॥

॥ ४ ॥

जो लौँ मन तत्तुहिँ नहिँ पकरै ।
तो लौँ कुमति किवार न टूटै, दया नाहिँ उघरै ॥१॥
काहे के तीरथ बरत भटकि भ्रम, थाकि थाकि थहरै ।
मंडप महजिद मुरति सुरति करि, धोखेहिँ ध्यान धरै ॥२॥
काहेके अनत जिवन फल तोरै, का पाँच अनल बरै ।
काहेके थल करि जल पर सोवै, भुइँ खनि खँदक परै ॥३॥
दान यिधान पुरान सुनै नित, तौ नहिँ काज सरै ।
धरनी भवजल तत्तु नाव री, चढ़ि चढ़ि भक्त तरै ॥४॥

---

*मज्जा = हड्डी का गूदा, या सड़ा पंछा । † भाग कर । ‡ गाली ।

(राग गौरी)

॥ १ ॥

सुमिरो हरि नामहिं बौरे ॥टेक॥
चक्रहुँ चाहि चलै चित चंचल, मूल मता गहि निरुचल कौ रे।
पाँचहुँ तैं परिचै करु प्रानी, काहेके परत पचीस के झौरे* ॥
जौं लगि निरगुन पंथ न सूझै, काज कहा महि-मंडल दौरे ॥
सब्द अनाहद लखि नहिं आवै, चारो पन चलि ऐसाहिं गौ रे ॥
ज्यौं तेली को बैल बेचारा, घरहिं में कोस पचासक भौरे ॥४
दया धरम नहिं साधु की सेवा, काहेके सो जनमे घर बौरे !
धरनीदास तासु बलिहारी, झूठ तजो जिन्ह साँचहिं धौ रे ।

॥ २ ॥

रे बन्दे तू काहे के तोत दिवाना ।
एक अलाह दोस्त है तेरा, अवर तमाम बेगाना ॥१॥
कौल करार बिसारि बावरो, मान मनी मन माना ।
आखिर नहिं दुनियाँ में रहना, बहुरि उहाँईं जाना ॥२॥
जाहिर जीव जहान जहाँ लगि, सब मों एक खोदाई ।
बहुरि गनीम‡ कहाँ तैं आया, जा पर छुरी चलाई ॥३॥
दूर नहीं है दिल का मालिक. बिना दरद नहिं पैहौ ।
धरनी बाँग बुलंद पुकारै. फिरि पाछे पछितैहौ ॥४॥

॥ ३ ॥

अब हरि दासि भई, तातैं गही चरन चित लाय ॥टेक॥
रही लजाय लोक की लज्जा, बिसरि गई कुल कानी ।
उपजी प्रीति रीति अति बाढ़ी, बिनुहीं मोल बिकानी ॥१॥

* झमेला । † गहा । ‡ शत्रु ।

छाजन भोजन की नहिँ संसय, सहजहिँ सहज कमाये।
संग सहेलरि छोड़ि कै अब, नेकु नाहिँ बिलगाये ॥२॥
दुखदाई दरसै नहीं हो, दहु दिसि सकल दयाल।
अपनो प्रभु अपने गृह पायो, छटकि परो जंजाल ॥३॥
अब काहू के द्वार न आवो, नहिँ काहू के जाव।
धरनी तहँ सच पाइयो, अब जहाँ धनी को नाँव ॥४॥

(राग कल्यान)

जा के गुरु चरनन चित लागा।
ता के मन की भरम भुलानी, धंधा धोखा भागा ॥१॥
सो जन सोवत अवचकही मेँ, सिंह सरीखे जागा।
धनि* सुत जन धन भवन न भावत, धावत बन बैरागा ॥२॥
हरखित हंस दसा चलि आयो, दुरि गयो दुरमत कागा
पाँचहु को परपंच न लागै, कोटि करै जौँ दागा ॥३॥
साँच अमल तहँ झूठ न झाँकै, दया दीनता पागा।
सत्त सुकृत संतोष समानो, ज्योँ सूई मध धागा ॥४॥
लै मन पवन उरध को धावै, उपजु सहज अनुरागा।
धरनी प्रेम मगन जन कोई, सोइ जन सूर सुभागा ॥५॥

(राग केदार)

॥१॥

अजहु न गुरु चरनन चित दैहो ॥टेक॥
नाना जोनि भटकि भ्रमि आये, अब कब प्रेम तीरथहिँ न्हैहो ॥१
बड़ कुल बिभव भरम जनि भूलो, प्रभु पैहौ जब दास कहैहो ॥२

---

*स्त्री। बिरागी।

एह संगति दिन दस कि दसा है, कथि कथि पढ़ि पढ़ि
पार न पैहौ ॥ ३ ॥
करम भार सिर तें नहिं उतरै, खंड खंड महि-मंडल धैहौ* ॥४
बिनु सतगुरु सतलोक न सूझै, जनमि जनमि
मरि मरि पछितैहौ ॥५॥
धरनी ह्वैहौ तबही साँचे, सतगुरु नाम ठहरैहौ ॥ ६ ॥

॥ २ ॥

अजहुँ मिलो मेरे प्रान-पियारे ।
दीनदयाल कृपाल कृपानिधि, करहु छिमा अपराध हमारे ॥१
कल न परत अति बिकल सकल तन, नैन सकल जनु†
बहत पनारे ।
माँस पचो अरु रक्त रहित भे, हाड़ दिनहुँ दिन होत उघारे ॥२॥
नासा नैन स्रवन रसना रस, इंद्री स्वाद जुआ जनु हारे ।
दिवस दसो दिसि पंथ निहारति, राति बिहात‡ गनत जस तारे॥ ३
जो दुख सहत कहत न बनत मुख, अंतरगत के हौ जाननहारे ।
धरनी जिव झलमलित दीप ज्यों, होत अँधार करो उँजियारे ॥४

(राग बिहागरा)

॥ १ ॥

जग में सोई जीवनि जिया ।
जा के उर अनुराग उपजो, प्रेम प्याला पिया ॥१॥
...... उलटो भर्म छूटो, अजप जप जपिया ।
...हु अँधारे भवन भीतर, बारि राखो दिया ॥२॥

*दौड़ोगे । †जैसे । ‡बीतती है ।

काम क्रोध समोधियो, जिन्ह घरहि में घर किया।
माया के परिपंच जेते, सकल जानो छिया ॥३॥
बहुत दिन को बहुत अरुझो, सहजहीं सरुझिया।
दास धरनी तासु बलि बलि, भूँजियो जिन्ह बिया* ।

॥ ३ ॥

रमैया राम भजि लेहु हो, जा तैं जनम मरन मिटि जाय ॥टेक॥
सहर बसै एक चौहटा हो, एकै हाट परवान।
ताही हाट के बानिया हो, बनिज न भावत आन ॥१॥
तीनि तरे एक ऊपरे हो, बीच बहै दरियाव।
कोइ कोइ गुरुगम ऊतरैं हो, सुरति सरीखे नाव ॥२॥
तीनि लोक तीनि देवता हो, सो जाने नर लोय।
चौथे पद परिचै भई हो, सो जन बिरले कोय ॥३॥
सोइ जोगी सोई पंडित हो, सोइ बैरागी राव।
जो एहि पदहिं बिलोइया हो, धरनी धरे ता को पाँव ॥४॥

॥ ३ ॥

पिय बड़ सुन्दर सखि, बनि गैला सहज सनेह ॥टेक॥
जे जे सुन्दरि देखन आवै, ता कर हरि ले ज्ञान।
तीन भुवन कै रूप तुलै नहिं, कैसेके करउँ बखान ॥१॥
जे अगुवा† अस कइल धरतुई‡, ताहि नेवछावरि जाँव।
जे बाम्हन अस लगन बिचारल, तासु चरन लपटाँव ॥२॥
चारिउ ओर जहाँ तहँ चरचा, आन कै नाँव न लेइ।
ताहि सखी की बलि बलि जैहौं, जे मोरी साइति§ देइ ॥३॥

---

*बाज। †बिचौलिया। ‡सगाई। §मुहूर्त्त (ब्याह का)

झलमल झलमल झलकत देखो, रोम रोम मन मान।
धरनी हर्षित गुन गन* गावै, जुग जुग है जनि आन ॥४॥

॥ ४ ॥

अवचक आइ गैला पिया कै सनेसवा, ताखन† उठलिउँ जागि रे।
राम राम करि घर से निकसलिउँ, जे जहँ से तहँ तयागि रे ॥१
सत कै सिँधोरा कर पर मोरा, प्रेम पटम्बर पागि रे।
काजल लागु चपल चौधरिया, चित्त चतुरता भागि रे ॥२॥
पूर परी कुरखेतहिँ‡ चढ़लिउँ, जन परिजन से बागि§ रे।
करम भरम कर चिता सजावल, ब्रह्म अगिन तेहिँ लागि रे ॥३
धरनी धनि तहँ भक्ति भाँवरी, चित अनुभै अनुरागि रे।
अबकी गवना बहुरि नहिँ अवना, बोलहु राम सुभागि रे।४।

(राग पंजर)

॥ १ ॥

तुहिं अवलंब हमारे हो।
भावै पगु नाँगे करो, भावै तुरय‖ सवारे हो ॥१॥
जनम अनेकन बादि गौ, निजु नाम बिसारे हो।
अब सरनागत रावरी, जन करत पुकारे हो ॥२॥
भवसागर बेरा परो, जल माँझ मँझारे हो।
संतत¶ दीनदयाल हो, कर पार निकारे हो ॥३॥
धरनी मन बच कर्मना, तन मन धन वारे हो।
अपनो बिरद निवाहिये, नहिँ बनत बिचारे हो ॥४॥

---

* अनेक। † तुर्त। ‡ कुरुक्षेत्र अर्थात रणभूमि। § अलग होकर। ‖ घोड़ा।
¶ निरंतर।

॥ २ ॥

प्रभु तो बिनु को रखवारा ॥टेक॥

हौं अति दीन अधीन अकर्मी, बाउर बैल बेचारा।
तू दयाल चारो जुग निस्चल, कोटिन्ह अधम उधारा ॥१॥
अबके अजस अवर नहिं लागे, सरबस तोहिं बड़ाई।
कुल मरजाद लोक लज्जा तजि, गह्यो चरन सरनाई ॥२॥
मैं तन मन धन तो पर वार्यो, मूरख जानत ख्याला।
ब्याउर* बेदन† बाँझ न बूझै, बिनु दागे नहिं छाला ॥३॥
तुलसी भूषन भेष बनायो, स्त्रवन सुन्यो मरजादा।
धरनी चरन सरन सच पायो, छुटिहै बाद बिबादा ॥४॥

॥ ३ ॥

प्रभु तू मेरो प्रान पियारा ॥टेक॥

परिहरि‡ तोहि अवर जो जाचै, तेहि मुख छीया छारा।
तो पर वारि सकल जग डारौं, जौ बसि होय हमारा ॥१॥
हिन्दु से राम अल्लाह तुरुक के, बहु बिधि करत बखाना।
दुहुँ को संगम एक जहाँ, तहवाँ मेरो मन माना ॥२॥
रहत निरंतर अंतरजामी, सब घट सहज समाया।
जोगी पंडित दानि दसो दिसि, खोजत अंत न पाया ॥३॥
भीतर भवन भयो उँजियारो, धरनी निरखि सोहाया।
जा निति देस देसंतर धावो, सो घटहीं लखि पाया ॥४॥

---

* बच्चे वाली स्त्री। † पीड़ा। ‡ छोड़कर।

॥ ४ ॥

मो सोँ प्रभु नाहिँ दुखित, तुम सोँ सुखदाई ॥टेक॥
दीनबन्धु बान तेरो, आइ करु सहाई ।
मो सोँ नहिँ दीन और, निरखो नर लोई ॥१॥
पतित-पावन निगम कहत, रहत हौ कित गोई* ।
मो सोँ नहिं पतित और, देखो जग टोई ॥२॥
अधम को उधारन तुम, चारो जुग ओई ।
मो तेँ अब अधम आहि, कवन धौँ बड़ाई ॥३॥
धरनी मन मनिया, एक ताग मेँ परोई ।
आपन करि जानि लेहु, कर्म फंद छोई† ॥४॥

कबित

॥ १ ॥

किया पट कर्म, तन दया नहि धर्म, तजो नहिँ भर्म,
किमि कर्म छूटै ।
दियो वहु दान, करि विविध विधान, मन बढ़ो अभिमान
जम प्रान लूटै ॥
जग्य अरु जोग, तप तीरथ व्रत नेम करि, विना प्रभु-प्रेम,
कलि काल कूटै ।
दास धरनी कहै, कौन विधि निर्वहै, जबै गुरुज्ञान
तब गगन फूटै ॥

---

* गुप्त । † छोड़ा कर, काट कर ।

॥ २ ॥

जीव की दया जेहि जीव ब्यापै नहीं, भूखे न अहार
प्यासे न पानी।
साधु से संग नहिँ सब्द से रंग नहिं, बोलि जानै न
मुख मधुर बानी॥
एक जगदीस को सीस अरपै नहीं, पाँच पच्चीस
बहु बात ठानी॥
राम को नाम निज धाम बिस्राम नहिं, धरनी कह
धरनि मेँ धृग सो प्रानी[*]॥

॥ ३ ॥

अधो मुख बास दस मास अवकास नहिँ, जठर मेँ
अनल की आँच बारी।
बालपन बीति गौ तरुनपन तेज भौ, परे बिष स्वाद
धन धाम नारी॥
वृद्धपन आइ गौ चौँकि चित चेत भौ, बिना जगदीस
जम त्रास भारी।
बूझि मन देखु तोहिँ सूझि कछु परत नहिं, धरनी तजि
चलै गो हाथ झारी॥

॥ ४ ॥

दुर्लभ देँह बिदेह कहा भयो, अंत को है पुहमी सटना[†]।
छिति[*] छार परो मुख भार[‡] जरो, तन गार[§] परो
प्रभु जा घट ना॥

---

[*] पृथ्वी पर ऐसे जीव को धिक्कार है। [†]गर्द में मिलना। [‡]भाड़। [§]मिट्टी,।

धरनी धरनी* धरु एक धनी पगु, जो कलि को फंद
चहै कटना।
तजु तीरथ बर्त बिधान सबै, करु नाम निरंजन की रटना॥

॥ ५ ॥

मौत महा उत्कंठा† चढ़ै, नहिं सूझत अंध अभागहु रे।
चित चेतु गँवार बिकार तजो, जब खेत पड़े कित भागहु रे॥
जिन बुंद बिकार सुधार कियो, तन ज्ञान दियो पगु ता गहु रे।
धरनी अपने अपने पहरे, उठि जागहु जागहु जागहु रे॥

॥ ६ ॥

दिन चोर को संपति संगति है, इतने लगि कौन मनी करना।
इक मालिक नाम धरो दिल में, धरनी भवसागर जो तरना॥
निज हक पहिचानु हकीकत जानु, न छोडु इमान दुनी घर ना।
पग पीर गहो पर-पीर हरो, जिवना न कछू हक है मरना॥

॥ ७ ॥

जीवन थोर बचा‡ भौ भोर§, कहा धन जोरि करोर बढ़ाये।
जीव दया करु साधु की संगति, पैहौ अभय पद दास कहाये॥
जा सन‖ कर्म छपावन हो, सो तो देखत है घट में घर छाये।
वेग भजो¶ धरनी सरनी, ना तो आवत काल कमान चढ़ाये॥

॥ ८ ॥

आवत जात परवाह सदा, धन जोरि बटोरि धरो न कबाहीं।
तू महराज गरीब-नेवाज, अकाज सकाज की लाज तुमाहीं॥

* टेक, धारना। †वेग या जोर के साथ। ‡बचा। §सवेरा। ‖से। ¶भागो।

जो हिरदे हरि को पद पंकज, सो मन मो मन तें बिसराहीं।
कह धरनी मनसा बच कर्मना, मोहिं अवर अवलंबन नाहीं॥

॥ ९ ॥

ज्ञान को बान लगो धरनी, जन सोवन चौंकि अचानक जागे।
छूटि गयो बिषया बिष बंधन, पूरन प्रेम सुधा रस पागे॥
भावत बाद बिबाद निखाद*, न स्वाद जहाँ लगि सो सब त्यागे॥
मूँदि गईं अँखियाँ तब तें, जब तें हिये में कछु हेरन लागे॥

॥ १० ॥

जननी पितु बंधु सुता सुत संपति, मीत महा हित संतत जोई।
आवत संग न संग सिधावत, फाँस मया परि नाहक खोई॥
केवल नाम निरंजन को जपु, चारि पदारथ जेहि तें होई।
बूझि बिचारि कहै धरनी, जग कोइ न काहु के संग सगोई॥

॥ ११ ॥

दियो जिन्ह प्रान कया सुख सम्पति,
बीच मिले तिन्ह नेह न कीं† रे।
होतो कहाँ औ कहा कहि आयो,
सो क्यौं बिसराय करो कछु औरे॥
जोग औ त्याग वैराग गहो,
धरनी धन काज कहा पचि दौरे।
अंतहिं तो तजिहै सब तोहि,
सो तू न तजै अबहीं क्यौं न बौरे॥

---

* निषेध। † कर।

॥ ककहरा ॥

(१)

प्रथम करता पुरुष को, कर जोरि मस्तक नाउँ ।
ककहरा निरवारि निर्मल, बोलि सबै सुनाउँ ॥१॥
क—कया परिचै करहु प्रानी, कवन अवसर जात ।
ख—खोजि ले निजु बस्तु अपनी, छोड़ि दे बहु बात ॥२॥
ग—ग्यान गुरु को कान सुनि, धरु ध्यान त्रिकुटी पास ।
घ—घूमते एक चक्र भँवरा, सेत उड़त अकास ॥३॥
ङ—उदै चंद अनंद उर अति, मोति बरसै धार ।
च—चमक बिजुली रेख दहुँ दिसि, रूप को नहिं पार ॥४॥
छ—छोट मोट न काहु जानौ, सबै एक समान ।
ज—जुक्ति जानै मुक्ति पावै, प्रगट पद निरबान ॥५॥
झ—झूठ झगर पवारि* डारो, झारि झटकि बिछाव ।
ञ—इंद्रियन के स्वाद कारन, आपु जनि जहँड़ाव† ॥६॥
ट—टेक टंडस छोड़ि दे, करु साध सब्द बिवेक‡ ।
ठ—ठौर सो ठहराइ ले, जहँ बसत साहब एक ॥७॥
ड—डार पात समूह साखा, फिरत पार न पाव ।
ढ—ढोल मारत साध जन, नहिं बहुरि ऐसो दाव ॥८॥
न—नाम नौका चढ़ो चित दे, बिना बाद बिवाद ।
त—तहाँ टै मन पवन राखो, जहाँ अनहद नाद ॥९॥

---

* फेंको । † ठगाव । ‡ ढँढ़सी यानी पाखंडियों का संग छोड़ कर शब्द-अभ्यासी बिवेकी साध का संग कर ।

थ—थकित होइ हैं पाँच, अरु पचीस रहि हैं थीर।
द—दसें द्वारे झलमलै, मनि मोति मानिक हीर ॥१०॥
ध—धोख धंधा जगत बंधा, कथै बहुत उदास।
न—निरबहैगो* तबहिं जब अभि†, अंतरे बिस्वास ॥११॥
प—प्रेम जा घट प्रगट भो, तहँ बसै पुन्न न पाप।
फ—फेरि मन तहँ उलटि धरु, जहँ उठत अजपा जाप ॥१२॥
ब—बिना मूल के फूल फूल्यो, हिये माँझ मँझार।
भ—भेदिया कोइ जानिहै, नाहिं और जाननहार ॥१३॥
म—मूल मंत्र ओंकार अद्भुत, निराधार अनूप।
य—यहाँ पहुँचहि कोई जन, जहँ छाँह नाहीं धूप ॥१४॥
र—राम जपु निजु धाम धवला‡, मन हृदै करु बिसराम।
ल—लोक चार बिचार परिहरु, प्रीति करु तेहिं ठाम ॥१५॥
व—वारि तन मन धन जहाँ लौं, जिव पवन अरु प्रान।
श—समुझि आपा मेटि अपनी, सकल बुधि बल ज्ञान ॥१६॥
ष—खैर रेंड़ बबूर सेहुँड़, सो न फरिहैं दाख§।
स—सर्व सुख के सुख एकै, दूसरी जनि राख ॥१७॥
ह—होत नर परमातमा तब, आतमा मिटि जात।
रहै अचल अबोल अस्थिर, कहै अविचल बात ॥१८॥
क्ष—छुए ताहि पवित्र हूजै, पुजै मन की आस।
सही करिहै संत जन, जत‖ कही धरनीदास ॥१९॥

---

* निर्वाह होगा। † हृदय। ‡ सफ़ेद। § छोहारा। ‖ यति=जैसा कि।

(२)

क—कायापुर में अलख भूलै, तहाँ करु पैसार* ।
सुरत द्वादस लाइ कै, तुम बाद करहु हँकार† ॥१॥
ख—खड़ग गहि गुरु ज्ञान को, तब मारु पाँच पचीस ।
उनमुनी घर रहनि करि, तुम जपो जन जगदीस ॥२॥
ग—गगन धुनि मन मगन भो, करु प्रेम तत्त प्रकास ।
ज्ञान अंकुस देइ के, गज‡ राखु त्रिकुटी पास ॥३॥
घ—घेरि है मन मोह माया, कहूँ नाहिं निकार ।
संत जन जेहि पंथ कहहीं, ताहि चेतु गँवार ॥४॥
ङ—अवधपुर§ में जाइ के, तू देखु ब्रह्म सुहाव ।
तहँ लोकचार‖ विचार नाहीं, वेद को नहिं भाव ॥५॥
च—चारि दिन सुख कारने, नर भुलो सकल सयान ।
काम क्रोधहिं कैद करिके, परसु पद निर्वान ॥६॥
छ—छुटा भौ अभि¶ अंतरे, मन गयो सहज अकास ।
तहँ सुखमना दह** कमल फूलो, सेत भँवर तेहिं पास ॥७॥
ज—जनम दुर्लभ जात है, नहिं जक्त कोउ पतियाय ।
बहुरि न ऐसो दाँव पैहो, लेहु उरध बनाय ॥८॥
झ—झपो है†† जहँ वस्तु झिलमिल, अभय घर उँजियार ।
तहाँ अमृत बुंद बरसै, जोगि करत अहार॥९॥
ञ—आदि इंद्र सुकादि‡‡ खोजहिं, पार किनहुँ न पाय ।
तुम आपु अपनी सीख रहि कै, द्वार दसम समाय ॥१०॥

---

* पैठारी, पहुँच । † अहंकार । ‡ हाथी अर्थात मन । § संतों का दसवाँ द्वार । ‖ लोकाचार । ¶ हृदय । ** तालाब । †† छिपी है । ‡‡ शुकदेव आदिक ऋषि मुनि ।

ट—टारि दे निजु भजन सेती, जन्म जन्म बिकार।
एक भक्ति बिनु मुक्ति नाहीं, कोटि करहु बिचार ॥११॥
ठ—ठाँव सोई सराहिये, जहँ बरसई जल धार।
इक पिंगल बिच अंतरे, तहँ प्रेम धुनि ओंकार ॥१२॥
ड—डंभ औ षट स्वाद जारी, ब्रह्म अग्नि प्रचारु।
आपु अपनी सीष रहिकै, द्वादसो संभारु ॥१३॥
ढ—ढरन* कठिन ए यार देखो, नाथ की यह रीति।
तहँ जाति पाँति बिसाइ नाहीं, भक्तजन सों प्रीति ॥१४॥
न—नाम को सतभाव राखो, उर्ध सोँ करु नेह।
जब अभयपुर कहँ परग दीन्हो, छुटो भरम सँदेह ॥१५॥
त—तहीं पूरन रहनि करु, जहँ सक्ति सीव निवास।
ब्रह्मादि औ सनकादि खोजहिं, संत करहिं निवास ॥१६॥
थ—थीर नाहीं जगत देखो, जस सलिल† में नीर।
जात जनमत मरत पुनि पुनि, करत कृत बेपीर‡ ॥१७॥
द—दँहि कछु दया राखो, प्रीति करु वहि देस।
सुरति के घर निरति कथिया, ब्रह्म नटवर§ भेस ॥१८॥
ध—ध्यान धरु निसु बासरे, जहँ उठत अजपा जाप।
बिना रसना मंत्र ठहरै, छुटै जम को दाप‖ ॥१९॥
न—नाम रसना पाइ रे, नहिं दूसरो अस स्वाद।
यह मूढ़ को समझाइ कै, सब तजो वाद बिबाद ॥२०॥
प—प्रेम पवन ले तहाँ राखो, जहाँ जोति अपार।
तब पाप पुन्न नसाइया, जब प्रगट हूँ अनुसार ॥२१॥

---

* भ्रम। † सरित=नदी। ‡ बग़ैर गुरु के मनमुख करनी करता है। § बाँका, अनूठा। ‖ घमंड।

फ—फरन लागो प्रेम तरु*, जहँ गगन गूफा माहिं।
तहँ भानु ससि कै उदै नाहीं, होत धूप न छाँहिं ॥२२॥
ब—बरतिये निसु बासरे, जहँ ब्रह्म बिस्नु महेस।
निगम को जहँ गम्म नाहीं, जपहिं ध्रुव फनि सेस ॥२३॥
भ—भेद पायो भजन को, तब अवर नाहिं सुहाय।
जस कृपिन कछु कनक पायो, लियो हृदय जुड़ाय ॥२४॥
म—मोह माया जाल मेँ, नर परो है संसार।
तुम जोग जुक्ति बिचारि करि कै, उतरु भव जल पार ॥२५॥
य—यरा मरन† दुख बहुत पायो, लियो सरन तिहार।
अब नाम नेम निबाहये, हौँ संत तुव बलिहार ॥२६॥
र—राति दीवस तहाँ नहीं, होत साँझ न प्रात।
कोटिन महँ कोइ जानिहै, नहिं अवर बूझै बात ॥२७॥
ल—लोक लाज सौँ भजि करि कै, मिलो हरि कहँ जाय।
जस मीन जल के अंतरे, तस रहे संत समाय ॥२८॥
व—व्योम‡ ऊपर नाद अनहद, तहँ उठै झनकार
कोइ प्रेमि बिरहिनि जानिहै, नहिं अवर जाननहार ॥२९॥
स—स्वर्ग-मुख एक सर्प ऊड़े§, रहे सुन्न समाय।
जो देखिया सो मगन हूै, नहिं दूसरो पतियाय ॥३०॥
प—खोह‖ सेँ एक पर्बतो, तहँ बनो भिन्न अवास¶।
संत जन तेहिं भवन अटके, सुनत अनहद वास ॥३१॥
श—सकल संसय त्यागि के, तुम सेव पुरुष पुरान।
जिन पाइया वा ब्रह्म को, तिन भयो ऐसो ज्ञान ॥३२॥

---

* पेड़, वृक्ष। † जग मरन। ‡ आकाश के परे। § स्वर्ग को मुँह किये कुंडलिनी नाड़ी है। ‖ कंदरा या घाटी पहाड़ की। ¶ जुदा जुदा मंदिर या दीप बने हैं।

ह--हरख भा अभि अंतरे, मन मगन वहँ खिचि लाग।
बिना मूल के फूल फूल्यो, देखि षटपद जाग* ॥३३॥
क्ष--छाया नाहीँ अपनि देखो, अवर के कहु मोर।
जब अभयपुर को परग दीन्हो, छुटो हाथी घोर ॥३४॥

———

चौँतीस आखर† जोग बरनन, काल कर्म बिचार।
धरनिहिं निज प्रभु जानिये, अब राखु सरन मुरार ॥३५॥

(३)

क--करता आदि अंत अबिनासी।
करता अगम अगोचर बासी ॥१॥
करता केवल आपहिं आप।
करता के कोउ माय न बाप ॥२॥
ख--खासा होय सो करतहिं जाना।
खाम‡ खलक धंधा लपटाना ॥३॥
खुसी होत धन आवत हाथे।
खाली जात चले नहिं साथे ॥४॥
ग--गुरु के चरन गहो चित लाई।
गुरु सत मारग देत दिखाई ॥५॥
गह्यो जो दृढ़ करि अधर अधारा।
गयो उतरि सो भवजल पारा ॥६॥
घ--घट घट बसे कतहुँ नहिं सूना।
घाट लखे जेहि पुरबल पूना§ ॥७॥

---

* षटपद भँवरा को कहते हैं यानी भँवरा रूपी मन जागा। † अक्षर। ‡ कच्चे यानी झूँठे। § पुन्य।

घट में जो आवे बिस्वासा।
घर में बैठे बिलसि बिलासा ॥८॥
उ—उत्तम जनम जगत में ता को।
उरध उलटि चढ़ो मन जा को ॥९॥
उज्जल मनसा हरि ब्रत धारी।
उन तें कहो कवन अधिकारी ॥१०॥
च—चंचल चित असथिर करि राखो।
चंचल बचन कबहुँ जनि भाखो ॥११॥
चारि दिना जगजीवन आथी*।
चलत बार कोउ संग न साथी ॥१२॥
छ—छिया बुंद पर छबि लपटाई।
छिया सोई छबि देखि लोभाई ॥१३॥
छिता† महँ करि ले राम सनेही।
छिन यक माहिं छुटेगी देही ॥१४॥
ज—जक्त माहिं जगदीस पियारा।
जो बिसरावे सो चंडारा ॥१५॥
जिन जिन जगजीवन ब्रत धारी।
जरा मरन की संसय टारी ॥१६॥
झ—झगरा करै कथै सुधवाई।
झाँझरि नाव पार कस जाई ॥१७॥
झूठ कहत जेहिं त्रास न आवै।
झोरि झोरि जम ताहि झुलावै ॥१८॥

---

* है। पृथ्वी, † संसार।

ञ—इंद्री स्वाद रहे अरुझाई ।
ईसुर भक्ति हृदय बिसराई ॥१९॥
इहै प्रमान करो मन माहीं ।
इह अवसर पैहौ पुनि नाहीं ॥२०॥

ट—टहल करो साधू जन केरी ।
टार बार परिहरि* बहुतेरी ॥२१॥
टंडसा† तें बाढ़े जंजाला ।
टापा‡ लेइ पुनि छोपै काला ॥२२॥

ठ—ठाकुर एक है सिरजनहारा ।
ठाँव ठाँव दै सबहिं अहारा ॥२३॥
ठाकुर छोड़ि आन मन लावै ।
ठावहिं आपन काज नसावै ॥२४॥

ड—डारी धरि मूलहिं बिसराय ।
डहँकि लोक पाखंडहिं खाय ॥२५॥
डर नहिं आवै ता दिन केरा ।
डोलत अंध बकै बहुतेरा ॥२६॥

ढ—ढोलिया§ साधु सदा संसारा ।
ढाल‖ धरो सतसंग उबारा ॥२७॥
ढाल कहाँ होइ रहे वेदानी¶ ।
ढरकि जाइहो ज्यों घट पानी ॥२

न—नाम निरंजन करो उचारा ।
नाम एक संसार उबारा ॥२९॥

---

*छोड़ कर । †बेगारी कया यानी ठिकाने का काठ । ‡थि

नाम नाव चढ़ि उतरहि दासा ।
नाम बिहूने* फिरहिँ उदासा ॥३०॥

स—तारन तरन अवर नहिँ कोई ।
ताहि देखु मूरख नर लोई ॥३१॥

तुलसी पहिरि तमोगुन त्यागे ।
ताके आदि अंत नहिँ खाँगे† ॥३२॥

थ—थापन‡ अथपन§ थापनहारा‖ ।
थीर करै मन गगन मॅझारा ॥३३॥

थिर भयो मन छूटेव जंजाला ।
थरथर थहरै ता को काला ॥३४॥

द—दुरलभ तन नर देँहो पाय ।
दाव इहै हरि भक्ति दृढ़ाय ॥३५॥

देखा देखी भरत अनारी ।
देखु आपने हिये विचारी ॥३६॥

घ—धर्म दया कीजे नर प्रानी ।
ध्यान धनी को धरिये जानी ॥३७॥

धन तन चंचल थिर न रहाई ।
"धरनी" गुरु को करु सेवकाई ॥३८॥

न—नहिँ तामस नहिँ तृस्ना होई ।
नर अवतार देव गन साँई ॥३९॥

निरमल पद गावै दिन राती ।
निरमल सोभै कवनिहुँ जाती ॥४०॥

---

* खाली । † घटो । ‡ जिसका स्थापन किया जाता है । § जिसकी स्थापना नहीं हो सकती । ‖ स्थापन करने वाला यानी सब का करता मन ।

प—परसुराम अरु बिरमा माई ।
पुत्र जानि जग हेतु बड़ाई ॥४१॥
प्रगटि धरनि ईसुर करि दाया ।
पूरे भाग भक्ति हरि पाया ॥४२॥
फ—फोकट फंद परे नर भूले ।
फिरि फिरि गर्भ अधोमुख झूले ॥४३॥
फेरै अरध उरध लै लावै ।
फिर नाहीँ भवसागर आवै ॥४४॥
ब—बहुत गये तरि यही उपाई ।
बहुत रहे यहि दिसि अरुझाई ॥४५॥
बड़े पुन्न भव मानुष देँही ।
बाद जात विनु राम सनेही ॥४६॥
भ—भेष बनाय कपट जिय माहीँ ।
भवसागर तरिहैँ सो नाहीँ ॥४७॥
भाग होय जा के सिर पूरा ।
भक्ति काज विरले जन सूरा ॥४८॥
म—मन गुड्डी गहि गगन चढ़ावै ।
ममता तजि समता उर छावै ॥४९॥
मधुर दीनता लघुता भाखै ।
मन वच कर्म एक व्रत राखै ॥५०॥
युक्ति विना कोइ मुक्ति न पावै ।
यो ब्रह्मंड खंड लगि धावै ॥५१॥

याके* हिय ना भेद समाना ।
यप† तप संयम करि पछिताना ॥५२॥

र—राम नाम सुमिरो रे भाई ।
राम नाम संतन सुखदाई ॥५३॥
राम कहत जम निकट न आवै ।
रिग यजु साम अथर्वन‡ गावै ॥५४॥

ल—लछमी जोरि संग जो लेई ।
लाख उपर दीया जो देई§ ॥५५॥
लोकचार चाटक‖ दिन चारी ।
लेहु आपनो काज सुधारी ॥५६॥

व—वा से कहौं सुनो चित लाई ।
वासर¶ गये बहुत पछिताई ॥५७॥
अवलोकहु** अपने मन माहीं ।
अवर प्रकार अंत सुख नाहीं ॥५८॥

श—सेत झलाझल झलकै जहाँ ।
सुरति निरति लव लावो तहाँ ॥५९॥
सहजहिं रहो गहो सेवकाई ।
सन्मुख मिलिहै आतमराई ॥६०॥

ष—खोजत धन नर फिरत बेहाला ।
खबरि न जाने पाछे काला ॥६१॥
खोटा बहुरि जाय खोटसारा ।
खरा चहूँ दिसि चलन पियारा ॥६२॥

---

*जाके । †जप । ‡वेदों के नाम । §अगले ज़माने में लाख रुपये के खज़ाने पर अखंड दीपक बालते थे । ‖चेटक=धोखा । ¶अवसर । **देखो ।

स—सार वस्तु ढूँढ़हु रे भाई।
साध कि संगति रहो समाई ॥६३॥
सत मारग बिनु मुक्ति न होई।
साँच सब्द सुनियो सब कोई ॥६४॥
ह—होहु दयाल बिसंभर देवा।
हम नहि जानहि पूजा सेवा ॥६५॥
हमरे नहिँ कछु करम निकोई*।
हरि किरपा होई सो होई ॥६६॥
छ—छोड़हु फाँसी करम गोसाँई।
छोरि लेहु जम तेँ बरियाई ॥६७॥
छोटी मति मैँ निपट अनारी।
छुटे जानि इक नाम तुम्हारी ॥६८॥

करम ककहरा जग लिपटाना।
संत ककहरा कोइ कोइ जाना ॥६९॥
जा घट भा अनुभव परगासा।
तिन की बलि बलि धरनीदासा ॥७०

॥ अलिफ़नामा ॥

अलिफ़—आप अन्दर बसै, बे—बतलावै दूर।
[illegible]—तन मैँ तहक़ीक़ कर, अलिफ़ अजाएब नूर ॥१॥

---

*नेक, शुभ।

से—सालिस* होय समुझि ले, जीम—जहान बसीर† ।
हे—हयात‡ को खाक में, खे—आखिर होत खमीर§ ॥ २ ॥
दाल—दिलहि में दोस्त है, ज़ाल—ज़िकर‖ कर पेश ।
रे—रहीम¶ के राह चढ़, ज़े—ज़िन्दा दरवेश ॥ ३ ॥
सीन—सपेद सुवास गुल, शीन—शिकम** दर माँहि ।
साद—सुरत साबूत है, ज़ाद—ज़मीर झराहि††॥ ४ ॥
तो—तालिब‡‡दीदार होय, ज़ो—ज़ालिम उठ जाग ।
ऐन—अक़ीदा§§ बाँध ले, ग़ैन—ग़ाफ़िली त्याग ॥ ५ ॥
फ़े—फ़ाज़िल अन्दर पढ़े, क़ाफ़—क़ोरान तमाम ।
काफ़—करे मति काहिली‖‖, लाम—लेत निज नाम ॥ ६ ॥
मीम—मेरा माशूक़ है, नूँ—नादिर¶¶ कोइ जान ।
वाव—वोही की फ़िकर में, हे—हरदम रह मस्तान ॥ ७ ॥
लाम—लेहु ठहराय के, अलिफ़—अकेला सोय ।
हमज़ा—ये मुरशिद विना, धरनी लखै न कोय ॥ ८ ॥

पहाड़ा

एका एक मिलै गुरु पूरा, मूल मंत्र जो पावै ।
सकल संत की बानी बुझै, मन परतीत बढ़ावै ॥१॥

---

* पच, बिचौलिया । † सुझाका । ‡ जीवन, ज़िन्दगी । § मेला । ‖ सुमिरन । ¶ दयाल । ** पेट । †† मन की सफाई करो । ‡‡ माँगनेवाला । §§ प्रतीत । ‖‖ सुस्ती । ¶¶ अनूठा, अचरजी ।

दूजा दुई तजै जो दुविधा; रजगुन तमगुन त्यागै ।
सतगुरु मारग उलटि निरेखै, तब सोवत उठि जागै ॥२॥
तीया तीन त्रिवेनी संगम, सो बिरले जन जाना ।
तृस्ना तामस छोड़ि दे भाई, तब करु वहँ प्रस्थाना ॥३॥
चौथे चारि चतुर नर सोई, चौथे पद कहँ लागो ।
हँसि के परम हिंडोलना झूलै, निरखत भा अनुरागी ॥४॥
पँचयें पाँच पचीसहिं बस करि; साँच हिये ठहरावै ।
इँगला पिंगला सुखमन सोधै, गगन मँडल मठ छावै ॥५॥
छठयें छवो चक्र को बेधै, सुन्न भवन मन लावै ।
बिगसत कमल काया करि परिचै, तब चंदा दरसावै ॥६॥
सतयें सात सहज धुनि उपजै, सुनि सुनि आनँद बाढ़ै ।
सहजहिं दीनदयाल दया करि, बूड़त भवजल काढ़ै ॥७॥
अठयें आठ अकासहिं निरखो, दृष्टि अलोकन होई ।
बाहर भीतर सर्ब निरंतर, अंतर रहै न कोई ॥८॥
नवें नवो दुवारहिं निरखै, जगमग जगमग जोती ।
दामिनि दमकै अमृत बरसै, निझर झरै मनि मोती ॥९॥
दसयें दस दहाइ पाइ कै, पढ़ि ले एक पहारा ।
धरनीदास तासु पद बंदै, अहि निसु बारम्बारा ॥१०॥

बारहमासा

॥ दोहा ॥

चैत चलहु मन मानि कै, जहँ बसै प्रान पियार।
हिलि मिलि पाँच सहेलरी, पंच-पाँच* परिवार ॥१॥

॥ छंद ॥

परिवारि जोरि बटोरि लीजै गोरि खोरि† न लाइये।
बहुरि समय सरूप अस ना जानिये कब पाइये ॥२॥

॥ दोहा ॥

बैसाखहिँ बनि ठनि धनी, साजहु सहज सिँगार।
पहिरो प्रेम पटम्बारो, सुनि लो मंत्र हमार ॥३॥

॥ छंद ॥

सुनि लेहु मंत्र हमार सुन्दरि हार पहिरु एकावरी।
छोड़ि मान गुमान ममता अजहुँ समझहु बावरी ॥४॥

॥ दोहा ॥

जेठ जतन करु कामिनी, जन्म अकारथ जाय।
जोबन गरब भुलाहु जनि, कछु करि लेहु उपाय ॥५॥

॥ छंद ॥

करि लेहु कछुक उपाय नहिँ दुख पाय फिर पछिताइ है।
जब गाँठि को गथ§ नाटि‖ है तब ढूँढ़ते नहिँ पाइ है ॥६

॥ दोहा ॥

अजहुँ असाढ़ समुझि चित, यहि दिसि हित नहिँ कोय
अद्‌भुत अरथ दरब सब, सुपन अपन नहिँ होय ॥७॥

---

* पच्चीस प्रकृति। † भरम। ‡ धन=स्त्री। § बँधा हुआ। ‖ गिर जाना

॥ छंद ॥

अपन नहिं कछु सुपन सब सुख, अंत चलिहौ हारिकै ।
मातु पितु परिवार पुनि तेहिं, डारि हैं परिचारि कै ॥८॥

॥ दोहा ॥

सावन सकुच करहु जनि, धावन* पठवहु चोख† ।
बहुत दिवस लगि भटकियो, अब जनि लावहु धोख ॥९॥

॥ छंद ॥

जनि धोख लावहु चोख धावहु, जो कहावहु पीव की ।
करत कोटि उपाव चिंता, मेटि है नहिं जीव की ॥१०॥

॥ दोहा ॥

भामिनि भइल जोबन तन, भजि लेहु भादौं मास ।
पत न रहहि निजु पती बिनु, ह्वै है जग उपहाँस ॥११॥

॥ छंद ॥

होइ है उपहाँस जग में, मान मानन जनि करो ।
समुझि नेह सनेह स्वामी, हरखि लै हरिदै धरो ॥१२॥

॥ दोहा ॥

आसुन‡ बिरह बिलासिनी, मिलहु कपट पट खोल ।
नाहिं तौ कंत रिसाइ हैं, मुख हूँ नाहीं बोल ॥१३॥

॥ छंद ॥

मुख बोलि नहिं कछु आइ है, भरमाई है घर घर घरे ।
तब कहा कूप खनाइ हौ§ , जब आगि छप्पर पर परे ॥१

* हरकारा । † जल्दी । ‡ कुवार । § तब कुआँ खोदा कर क्या करोगे ।

॥ दोहा ॥

कातिक कुसल तबहिँ सखी, जबहिँ भजो पिय जानि।
बहुरि बिछोह कबहुँ नहीं, ह्वैहौ जुग जुग रानि ॥१५॥

॥ छंद ॥

जुग रानि ह्वैहौ जानि जिय धरि, दानि* कोइ न दूसरो।
हित सारि† खेत बिसारि अपनो, बीज डारत ऊसरो ॥१६॥

॥ दोहा ॥

अगहन उत्तर दिये सखि, हम अबला‡ अवतार।
जतन करत ना बनत कछु, कठिन कुटिल संसार ॥१७॥

॥ छंद ॥

कुटिल यह संसार, बरु§ जरि जाइ जोबन ऐसहीं।
निज कंत जो अपनाइ हैं, चलि आइ हैं घर वैसहीं ॥१८॥

॥ दोहा ॥

पूस पलटि प्रभु आयऊ, प्रगटेव परम अनंद।
घर घर सगर‖ नगर सुखी, मिटेव दुसह दुख दुंद ॥१९॥

॥ छंद ॥

दुख दुंद मेटेव चन्द भेँटेव, फंद सबन छुटाइया।
पुलकि¶ बारम्बार हूँ, परिवार मंगल गाइया ॥२०॥

॥ दोहा ॥

माघ मुदित मन छिनहिं छिन, दिन दिन बढ़त सोहाग।
नैहर भरम भटकि गयो, सासुर संक** न लाग ॥२१॥

॥ छंद ॥

नहि लागु सासुर संक हे सखि, रंक जनु राजा भयो।
निज नाह†† मिलियो बाँह ग्रिव‡‡ दे, सकल कलमख दुरि गयो २२

---

*दानी, दाता। † अच्छा, उपजाऊ। ‡ स्त्री। §चाहे। ‖सब। ¶ मगन।
** शंका, डर। ††पति। ‡‡गर्दन में।

॥ दोहा ॥

फागुन फस्यो अमी फल, भख्यो सकल दुख पात ।
निसु दिन रहत मगन मन, सो मुख कह्यो न जात ॥२३॥

॥ छन्द ॥

कहि जात नहिं मुख ताहि मूरति, सुरति जहँ ठहराइया ।
सुनि बिमल बारह मास को, गुन दास धरनी गाइया ॥२४॥

बोध लीला ।

प्रथमहिं बरनौं एकै करता । आदि अंत मधि भरता हरता ॥१
तब बंदौं सतगुरु के पाँव । परस जो सोवत जीव जगावँ ॥२॥
तब पुनि सकल साधु सिर नावौं । जा की दया अमय पद पावौं ३
स्रवनन्ह सुनी संत की बानी । तब पुनि बेद पुरान कहानी ॥४॥
संसकार सतसंगति पाई । तब यह जग मिथ्या ठहराई ॥५॥
जित देखा इस्थित नहिं कोई । सो इस्थित जा तें सब होई ॥६
संसा करि संसार भुलाना । सो सब हृदय कियो अनुमाना ॥७
जस सपने सुख संपति पावे । जागे काज कछू नहिं आवे ॥८
मरकट मुट्ठी छोड़ि न देई । बिनु बंधन तन बंधन लेई ॥९॥
नाभि सुगंध नासिका वासा । चरचत* फिरे चहूँ दिस घासा १०
दूजा देखो दरपन माहीं । छवि जनु एक बहुरि कछु नाहीं ११
नलनी बैठि सुगा जिमि भूला । भरसत अंध अधोमुख भूला १२
जल मद्धे प्रतिमा देखलावे । खोजत बिनसे हाथ न आवे १३

---

* ढूँढ़ता ।

अपनी देँह घुमावत बारा*। घूमत कहे सकल संसारा ॥१४

जानत जेँवरी† सरप अँधारे। निरजिव होत सो दीपक बारे १५

तृन को मानुज खेत मँझारा। मृग तेहि मद्ध चरे नहिँ चारा ॥१६॥

फटिक सिला अरुझे मै मंता‡। अपनी कुबुधि गँवायो दंता १७

देखत खाल गऊ गरबानी। हेतु करे अपनो सुत जानी ॥१८॥

अस्थिर आपु नावरी माहीँ। जानत अवर चले सब जाहीँ १९

भूँसत स्वान काँचु के ग्रेहा। मन अभिमान बिसारे देँहा ॥२०

मृग-तृस्ना जल धोखे धावे। थाकि परे पाछे पछितावे ॥२१॥

मानुष जन्म जुआ मेँ हारे। हरि भक्ती नहिँ हृदय बिचारे ॥२२

उदय अस्त जहाँ लगि देखा। सत्त आतमा राम बिसेखा ॥२३

एकै बीज वृच्छ होए आया। खोजत काहु अंत नहिँ पाया २४

देखो निरखि परखि सब कोई। सब फल माहिँ बीज एक होई ॥२५॥

पुरइन ज्योँ जल मध्य अकासा। एकै ब्रह्म सकल घट बासा २६

मनि-गन माल मध्य जिमि डोरा। सागर एक अनेक हिलोरा २७

एक भँवर सब फूल मँझारा। एक दीप सब घर उँजियारा २८

तत्तु निरंजन सब के संगा। पसु पंछी नर कीट पतंगा ॥२९॥

देखो आपन कया बिलोई। वाद बिवाद करे मति कोई ॥३०॥

काम क्रोध मद लोभ नेवारे। समता गहि ममता को मारे ३१

आन के दोस कबहुँ नहिँ धरई। जानत जीव के घात न करई ३२

निरपच्छी साँचहिँ अस्थावे§। निरदावा धन मृथा न खावे ३३

संतत धर्म अनासृत करई। सो प्रानी भवसागर तरई ॥३४॥

दुख सुख एकै भाव जनावे। अभिअंतर बिस्वास बढ़ावे ॥३५

---

* बेर, समय। † रस्सी। ‡ मदांध हाथी। § ठहरावे; गहै।

अस्तुति निंदा दुवो समाना। सुरनर मुनि गन ताहि बखाना ३६
तेहि समान तुले नहिँ कोई। जीवन-मुक्त कहावे सोई ॥३७॥
मन परमोध जाहि मन भावे। त्रिबिधि पाप तन ताप नसावे ३८
चित्रगुप्त धरमाधी राजा। काल दूत जम आरति साजा ३९
अपनो आपा आपु मिटाई। धरनीदास तासु बलि जाई ४०
ऐसी दसा बिराजी जा की। धरनी तहँ न रही कछु बाकी ४१

॥ साखी ॥

॥ गुरु ॥

धरनी जहँ लगि देखिये, तहँ लौं सबै भिखारि।
दाता केवल सतगुरू, देत न मानै हारि ॥१॥
धरनी यह मन मृग भयो, गुरू भये ज्यौं ब्याध।
बान सब्द हिये चुभि गयो, दरसन पाये साध ॥२॥
धरनि फिरहिँ देसंतरो, धरि धरि के बहु भेस।
कोई कोई देखि है, अंतर गुरु उपदेस ॥३॥
धूवाँ कै धवरेहरा* औ धूरी को धाम।
ऐसे जीवन जगत में, बिनु गुरु बिनु हरि नाम ॥४॥
धरनी सब दिन सुदिन है, कबहुँ कुदिन है नाहिँ।
लाभ चहूँ दिसि चौगुनो, (जो) गुरु सुमिरन हिये माहिँ ॥५॥

॥ चेतावनी ॥

धरनी धरि रहु हरि अंतहिँ, परिहरि सबही मोह।
धन सुत बंधु बिभव† जत, होवे अंत बिछोह ॥६॥

---

*ऊँचा घर। †ऐश्वर्य्य।

धरनी धोख न लाइये, कबहीँ अपनी ओर ।
प्रभु सोँ प्रीति निबाहिये, जीवन है जग थोर ॥७॥
गोरिया गरब करहु जनि, अपने गोरे गात ।
काल्हि परोँ चलि जाइ है, जैसे पियरे पात ॥८॥
धरनी चहुँ दिसि चरचिया*, करि करि बहुत पुकार ।
नाहीँ हम हैँ काहु के, नाहीँ कोउ हमार ॥९॥

॥ विरह और प्रेम ॥

धरनी धन वो बिरहनी, धारै नाहीँ धीर ।
विहवल विकल सदा चित, दुर्बल दुखित सरीर ॥१०॥
धरनी परबत पर पिया, चढ़ते बहुत डेराँव ।
कबहुँक पाँव जु डिगमिगै, पावौँ कतहुँ न ठाँव ॥११॥
धरनी धरकत है हिया, करकत आहि करेज ।
ढरकत लोचन भरि भरी, पीया नाहिन सेज ॥१२॥
धरनी धवल† धरेहरहिँ, चढ़ि चढ़ि चहुँ दिसि हेर ।
आवत पिय नहिँ दीखतो, भइली बहुत अबेर ॥१३॥
धरनी सो दिन धन्न है, मिलब जबै हम नाह‡ ।
संग पौँढ़ि सुख बिलसिहौँ, सिर तर धरि के बाँह ॥१४॥
धरनी धन की भूल हो, कछू बरनि नहिँ जाय ।
सनमुख रहती रैन दिन, मिलत नहीँ पिय धाय ॥१५॥
धरनी पलक परै नहीँ, पिय की झलक सोहाय ।
पुनि पुनि पीवत परम रस, तबहूँ प्यास न जाय ॥१६॥
धरनी धन तन जिवन यह, चाहे रहै कि जाय ।
हरि के चरनहिँ हृदय धरि, अब तौ हेन अढ़ाय ॥१७॥

---

* ढूँढ़ा । † सफेद । ‡ पति ।

धरनी सो धन धन्य हो, धन धन कुल उँजियार ।
जा कर बाँह धइल पिया, आपन हाथ पसार ॥१८॥

धरनी पिय जिन पावल, मेटि गइल सब दुंद ।
अरध उरध सुर गावल, हिरदय होय अनंद ॥१९॥

धरनी खेती भक्ति की, उपजे होत निहाल ।
खर्चै खाय निवरै नहिं, परै न दुक्ख दुकाल ॥२०॥

धरनी मन मिलबो कहा, जो तनिक माहिँ बिलगाय ।
मन को मिलन सराहिये, जो एक मेँ इक होइ जाय ॥२

॥ तत्व वस्तु ॥

तेरे मन मेँ तत्वहै, तौ अनते कित धाव ।
धरनी गुरु उपदेस लै, घरहिं माँहि घर छाव ॥२२॥

अर्ध कँवल के ऊपरे, तहाँ दुवादस एक ।
धरनी भौजल बूड़ते, गुरु गम पकरी टेक ॥२३॥

दिया दिया घर भीतरे*, बाती तेल न आगि ।
धरनी मन बच कर्मना, ता सोँ रहना लागि ॥२४॥

बिनु पगु निरत करो तहाँ, बिनु कर दैदै तारि ।
बिनु नैनन छबि देखना, बिनु सरवन झनकारि ॥२५॥

देह देवखरा भीतरे, मूरति जोति अनूप ।
मोती अच्छत चढ़तु है, धरनी सहज सरूप ॥२६॥

धरनी अरध उरध चढ़ि, उदयो जोति सरूप ।
देखु मनोहर मूरती, अतिहीँ रूप अनूप ।॥२७॥

बहुत दुवारे सेवना, बहुत भावना कीन्ह ।
धरनी मन संसय मिटो, तत्व परो जब चीन्ह ॥२८॥

---

* अंतर मेँ दीपक धरा है ।

धरनी चहुँ दिसि दौरियो, जहँ लौँ मन की दौर।
एक आतमा तत्व बिनु, अनत न पाई ठौर॥ २९॥
तब लगि प्रगट पुकारिया, जब लगि निबरी नाहिँ।
धरनी जब निबरी परी, मन की मनहीँ माहिँ॥ ३०॥
धरनी हृदय पलंगरी, प्रीतम पौढ़े आय।
सभा सुनी जो स्रवन तेँ, कहे कवन पतियाय॥ ३१॥
धरनी तन में तखत है, ता ऊपर सुलतान।
लेत मोजरा सबहिँ को, जहँ लौँ जीव जहान॥ ३२॥
बिनु अच्छर के अच्छरा, बिनु लिखनी का लेख।
बिनु जिभ्या का बाँचना, धरनी लखा अलेख॥ ३३॥
लिखि लिखि सिखि सिखि का भयो, पढ़ि गुन गाय बजा
धरनी मूरति मोहिनी, जौँ लगि हिये न समाय॥ ३४॥
अच्छर सब घट उच्चरै, जेते जिव संसार।
लागि निरच्छर जो रहे, ता अच्छर टकसार॥ ३५॥

॥ ध्यान॥

धरनी ध्यान तहाँ धरो, उलटि पसारो दृष्टि।
सहज सुभावहिँ होत जहँ, पुहुप माल की वृष्टि॥ ३६॥
धरनी ध्यान तहाँ धरो, जहवाँ खुलहि किवार।
निरखि निरखि परखत रहो, पल पल वारम्वार॥ ३७॥
धरनी ध्यान तहाँ धरो, प्रगट जोति फहराहि।
मनि मानिक मोती झरै, चुनि चुनि हंस अघाहि॥ ३८॥
धरनी ध्यान तहाँ धरो, त्रिकुटी कुटी मँझार।
घर के बाहर अधर है, सनमुख सिरजनहार॥ ३९॥

धरनी अधरे ध्यान धरु, निसिबासर लौ लाइ ।
कर्म कौंच मगु बीच है, (सो) कंचन गच ह्वै जाइ ॥ ४०

॥ आरती ॥

धरनी प्रभु को आरती, करिये बारंबार ।
ऊठत बैठत सोवते, अह निसि साँझ सकार ॥ ४१ ॥
साँझ समय कर जोरि कै, उभै* घरी जस गाव ।
धरनो दास सुचित्त† ह्वै, गुरु भक्तन सिरनाव ॥ ४२ ॥

॥ बिनती ॥

धरनी जन की बीनती, करु करुनामय कान ।
दीजै दरसन आपनो, माँगैाँ कछु नहिँ आन ॥ ४३ ॥
धरनी बिलखि‡ बिनती करै, सुनिये प्रभू हमार ।
सब अपराध छिमा करो, मैँ हौँ सरन तिहार ॥४४॥
धरनी सरनी रावरी, राम गरीब-नेवाज ।
क्वन करैगा दूसरो, मोहिँ गरीब के काज ॥ ४५ ॥
काहू के बहु विभव भइ, काहू बहु परिवार ।
धरनी कहत हमहिँ बल, ए हो राम तुम्हार ॥४६॥
बार बार संसार में, धरनी लागत चोट ।
अब पकरो परतच्छ है, राम नाम की ओट ॥ ४७ ॥
तिनुका दाँत के अंतरे, कर जोरे भुइँ सीस ।
धरनी जन बिनती करै, जानु§ परो जगदीस ॥ ४८ ॥

---

* दो । † एकचित । ‡ रोकर । § जाँघ, चरन ।

धरनी नहिँ बैराग बल, नाहिँ जोग सन्यास ॥
मनसा बाचा कर्मना, बिस्वंभर बिस्वास ॥ ४९ ॥
बिनती लीजे मानि करि, जानि दास को दास ।
धरनी सरनी राखिये, अवर न दूसर आस ॥ ५० ॥

॥ ब्राह्मण ॥

धरनी भरमी बाम्हने, बसहिँ भरम के देस ।
करम चढ़ावहिँ आपु सिर, अवर जे ले उपदेस ॥५१॥
करनी पार उतारिहै, धरनी कियो पुकार ।
साकित बाम्हन नहिँ भला, भक्ता भला चमार ॥५२॥
मास अहारी बाम्हना, सो पापी बहि जाउ ।
धरनी सूद्र बइस्नवा, ताहि चरन सिर नाउ ॥५३॥

॥ भेष ॥

कुल तजि भेष बनाइया, हिये न आयो साँच ।
धरनी प्रभु रीझै नहीँ, देखत ऐसो नाच ॥५४॥
भेष लियो दाया नहीं, ध्यान धतूरा भाँग ।
धरनी प्रभु काँचा नहीँ, जो भूलत ऐसे स्वाँग ॥५५॥

॥ नारी ॥

नारी बटमारी करै, चारि चैाहटे माहिँ ।
जो वोहि मारग होइ चले, धरनी निबहे नाहिँ ॥५६॥
दामिनी ऐसी कामिनी, फाँसी ऐसो दाम ।
धरनी दुइ तेँ बाचिये, कृपा करै जो राम ॥५७॥
धरनी ब्याही छोड़िये, जो हरिजन देखि लजाय ।
बेस्या संग बिराजिये, जो भक्ति अंग ठहराय ॥५८॥

॥ मिश्रित ॥

धरनी काहि असीसिए, औ दीजै काहि सराप ।
दूजा कतहुँ न देखिये, सब घट आपै आप ॥५९॥
धरनी कथनी लोक की, ज्यौं गोदर को ज्ञान ।
आगम भाखै और के, आपु परे सुख स्वान ॥६०॥
धरनी सो पंडित नहीं, जो पढ़ि गुन कथै बनाय ।
पंडित ताहि सराहिये, जो पढ़ा बिसरि सब जाय ॥
धरनी कागद फारिकै, कमल पवारै* दूर ।
कया कचहरी पैठिकै, बैठा रहै हजूर ॥६२॥
धरनी कोउ निंदा करै, तू अस्तुति करु ताहि ।
तुरत तमासा देखिये, इहै साधु मत आहि ॥६३॥
धरनी जिव जनि मारियो, माँसहि नाहीं खाहु ।
नंगे पाँव बबूर बन, होइ नाहिं निरबाहु ॥६४॥
माँस अहारी जीयरा, सो पुनि कथै गियान ।
नाँगी होय घूँघट करै, धरनी देखि लजान ॥६५॥
धरनी यह मन जम्बुका,† बहुत कुभोजन खात ।
साधु संग मृग होइ रहु, शब्द सुगंध बसात ॥६६॥
धरनी बाहर धुंधरो, भीतर ऊगो चंद ।
भयो भले को अति भलो, है मंदे को मंद ॥६७॥
बिष लागे दुनिया मरै, अमृत लागे साध ।
धरनी ऐसो जानिहै, जाको मता अगाध ॥६८॥

॥ शब्द ॥

धरनी सब्द प्रतीत बिनु, कैसहु कारज नाहिं ।
सब्द सिढ़ी बिनु को चढ़ै, गगन झरोखा माहिं ॥६९॥

---

* डाले। † स्यार।

सब्द सब्द सब कोइ करै, धरनी कियो बिचार ।
जो लागै निज सब्द को, ता को मता अपार ॥७०॥
सब्द सकल घट उचरे, धरनी बहुत प्रकार ।
जो जानै निज सब्द को, तासु सब्द टकसार ॥७१॥
धरनी धरम अरु करम कै, कलि में कछू न काम ।
मनसा बाचा करमना, भजिये केवल नाम ॥७२॥
परमारथ को पंथ चहि, करते करम किसान ।
ज्यों घर में घोड़ा अछत, गदहा करै पलान ॥ ७३ ॥
धरनी आपन मरम हो, कहिये नाहीं काहि ।
जाननहार सो जानिहै, जैसा जो कछु आहि ॥ ७४ ॥

चरनदास जी की बानी, पहला भाग	...	.	|||-)
चरनदास जी की बानी, दूसरा भाग	...	...	|||)
गरीबदास जी की बानी	...	...	१|-)
रैदास जी की बानी	...	...	||)
दरिया साहिब (बिहार) का दरिया सागर	...	...	|≡)||
दरिया साहिब के चुने हुए पद और साखी	...		|-)
दरिया साहिब (मारवाड़ वाले) की बानी	...	...	|≡)
भीखा साहिब की शब्दावली	...	...	||=)||
गुलाल साहिब की बानी	...	...	|||=)
बाबा मलूकदास जी की बानी	...	...	|)||
गुसाईं तुलसीदास जी की बारहमासी	.	...	-)
यारी साहिब की रत्नावली	...	...	≡)
बुल्ला साहिब का शब्दसार	...	...	|)
केशवदास जी की अमीघूँट	...	...	-)||
धरनी दास जी की बानी	...	...	|=)
मीराबाई की शब्दावली	...	...	||=)
सहजो बाई का सहज-प्रकाश	...	...	|≡)||
दया बाई की बानी	..	...	|)
संतबानी संग्रह, भाग १ (साखी) [प्रत्येक महात्माओं के संक्षिप्त जीवन चरित्र सहित]	...	...	१||)
संतबानी संग्रह, भाग २ (शब्द) [ऐसे महात्माओं के संक्षिप्त जीवन चरित्र सहित जो भाग १ में नहीं हैं]	...	...	१||)
			कुल २३||≡)
अहिल्या बाई	...	...	≡)

दाम में डाक महसूल व रजिस्टरी शामिल नहीं है वह इसके ऊपर लिया जायगा—

मिलने का पता—

मैनेजर, बेलवेडियर प्रेस, प्रयाग।

मूल्य केवल ६॥) । इसी असली रामायण का एक सस्ता संस्करण ११ बहुरंगा और ६ रंगीन यानी कुल २० सुन्दर चित्र सहित और सजिल्द १२०० पृष्ठों का मूल्य ४॥) । प्रत्येक कांड अलग अलग भी मिल सकते हैं और इनके काग़ज़ उमदा हैं ।

प्रेम-तपस्या—एक सामाजिक उपन्यास (प्रेम का सच्चा उदाहरण) मूल्य ॥)

लोक परलोक हितकारी—इसमें कुल महात्माओं के उत्तम उपदेशों का संग्रह किया गया है । पढ़िये और अनमोल जीवन को सुधारिये । मूल्य ।॥=)

विनय कोश—विनयपत्रिका के सम्पूर्ण शब्दों का अकारादि क्रम से संग्रह करके विस्तार से अर्थ है । यह मानस-कोश का भी काम देगा । मूल्य २)

हनुमान बाहुक—प्रति दिन पाठ करने के योग्य, मोटे अक्षरों में शुद्ध छपी है । मूल्य -)॥

तुलसी ग्रन्थावली—रामायण के अतिरिक्त तुलसीदास जी के अन्य ग्यारहों ग्रन्थ शुद्धता पूर्वक मोटे मोटे बड़े अक्षरों में छपे हैं और पाद टिप्पणी में कठिन शब्दों के अर्थ दिये हैं । सचित्र व सजिल्द मूल्य ४)

कवित्त रामायण—पं० रामगुलाम जी द्विवेदी कृत पाद टिप्पणी में कठिन शब्दों के अर्थ सहित छपी है । मूल्य ।=)

नरेन्द्र-भूषण—एक सचित्र सजिल्द उत्तम मौलिक जासूसी उपन्यास है । मूल्य १)

सन्देह—यह एक मौलिक क्रांतकारी नया उपन्यास है । बिना जिल्द ॥।) सजिल्द १)

चित्रमाला भाग १—सुन्दर मनोहर १२ रंगीन चित्रों का संग्रह तथा परिचय है । मूल्य ॥।)

चित्रमाला भाग २—सुन्दर मनोहर १२ रंगीन चित्रों का संग्रह है । मूल्य ॥।)

चित्रमाला भाग ३—सुन्दर मनोहर १२ रंगीन चित्रों का संग्रह है मूल्य १)

चित्रमाला भाग ४—१२ रंगीन सुंदर चित्र तथा चित्र-परिचय है मूल्य १)

गुटका रामायण—यह असली तुलसीकृत रामायण अत्यन्त शुद्धता पूर्वक छोटे रूप में है । पृष्ठ संख्या लगभग ४५० के है । इसमें अति सुन्दर ८ बहुरंगे और ५ रंगीन चित्र हैं । तेरहों चित्र अत्यन्त भावपूर्ण और मनमोहक हैं । रामायण प्रेमियों के लिये यह रामायण अपूर्व और लाभदायक है । जिल्द बहुत सुन्दर और मज़बूत तथा सुनहरी है । मूल्य केवल लागत मात्र १॥)

घोंघा गुरु की कथा—इस देश में घोंघा गुरु की हास्यपूर्ण कहानियाँ बड़ी ही प्रचलित हैं । उन्हीं का यह संग्रह है । शिक्षा लीजिए और ख़ूब हँसिए । ।)

गल्प पुष्पाञ्जलि—इसमें बड़ी उमदा उमदा गल्पों का संग्रह है । पुस्तक सचित्र और दिलचस्प है । दाम ॥=)

हिन्दी साहित्य सुमन— दाम ॥)